ISSN : 09758-4342

वनस्पति वाणी

सितम्बर, 2021 अंक 30

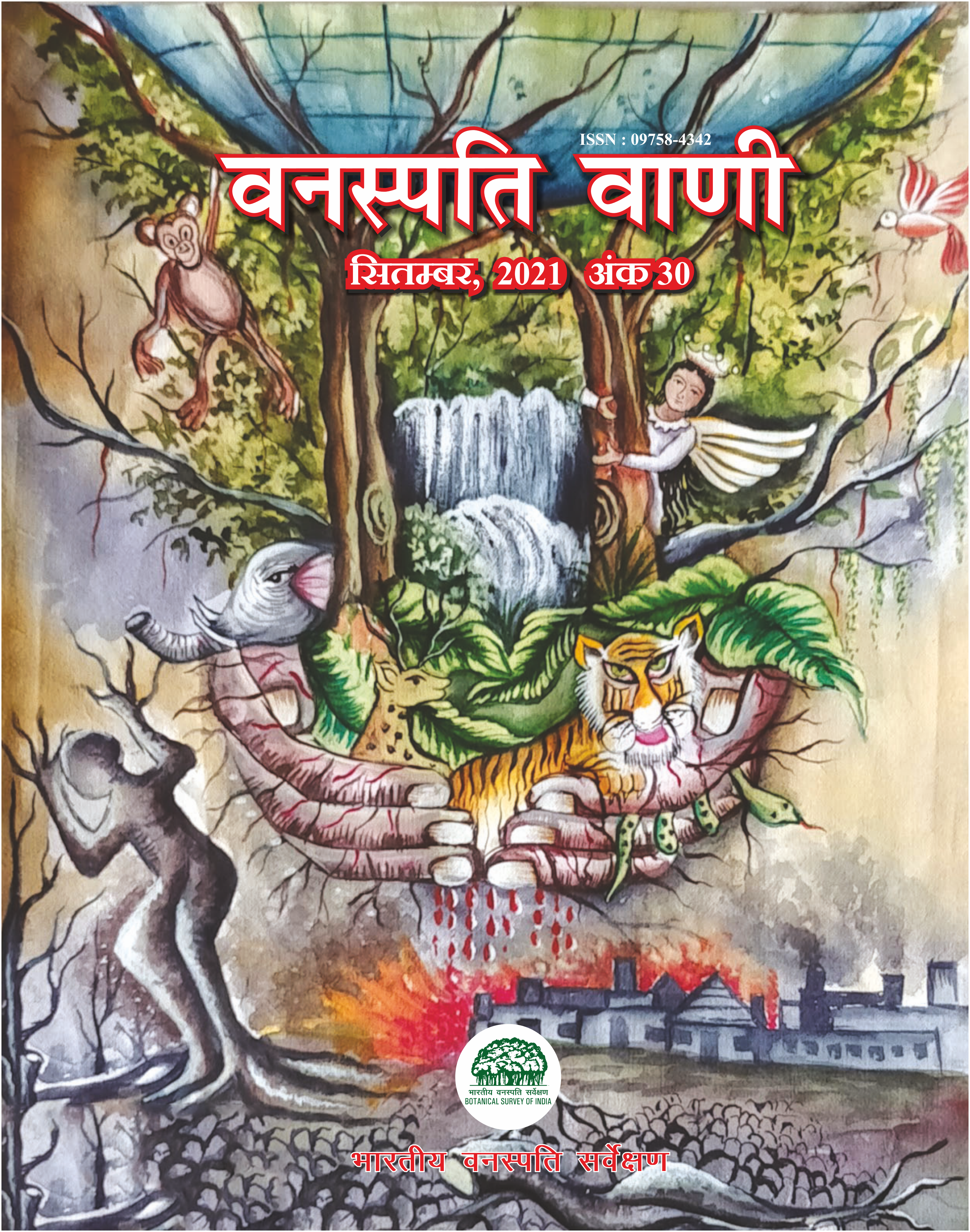

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

ISSN : 09758-4342

वनस्पति वाणी

सितम्बर 2021 अंक 30

पश्यैतान् महाभागान् पराबैंकान्तजीवितान्।
वातवर्षातपाहिमान् सहन्तरे वारयन्ति नः।।

(भावार्थः वृक्ष इतने महान होते हैं कि परोपकार के लिए ही जीते हैं।
ये आँधी, वर्षा और शीत को स्वयं सहन करते हैं।)

– (महाभारत, अनुशासन पर्व, अध्याय, 58, श्लोक 32)

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

©भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, 2021

इस प्रकाशन का कोई भी अंश निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की लिखित पूर्वानुमति के बिना पुनर्प्रवर्तित/ रिट्रिवल पद्धति में भण्डारण या इलैक्ट्रॉनिक, मैकेनिकल फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य किसी तरीके से ट्रांसमिट नहीं किया जा सकता है।

संरक्षण एवं प्रधान सम्पादक
ए.ए. माओ

सम्पादक मण्डल
दिनेश कुमार अग्रवाला
जीवन सिंह जलाल
एस. एस. दास

सहयोग
कैलाश प्रसाद कुशवाहा

डिजाइन
अंचल विश्वास

ISSN : 09758-4342

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, तृतीय एम.एस.ओ. भवन, एफ विंग, डी एफ ब्लॉक, सेक्टर -1, साल्ट लेक सिटी कोलकाता -7000 064 द्वारा प्रकाशित एवं दी बालाजी ऑफसेट, 15 - ए, विजय प्लॉट, क्लोज्ड स्ट्रीट, भगवती प्रिन्ट्री के विपरीत, राजकोट - 360002 द्वारा मुद्रित।

- वनस्पति वाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रमाणिकता एवं व्यक्त विचारों के लिये लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।
- इस अंक के प्रूफ संशोधन, मुद्रण क्रम में राजभाषा हिन्दी एवं प्रकाशन अनुभाग के सभी कर्मचारियों ने सक्रिय सहयोग दिया है।

डॉ. ए.ए. माओ
निदेशक
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

निदेशक की कलम से

भारत की वनस्पति विविधता अभूतपूर्व है। यह धरातल पर इस संबंध में सबसे समृद्ध राष्ट्र में गिना जाता है। भारत का इतिहास लोक परम्परा एवं लोक वानस्पतिक ज्ञान से भरपूर है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण राष्ट्र की वनस्पति सम्पदा एवं इससे जुड़े लोक वानस्पतिक ज्ञान को संकलित करता है। भारत की इस धरोहर का संरक्षण एवं आने वाली पीढ़ियों के उपयोग के लिए इसकी विविधता को जानना व समझना अत्यंत आवश्यक है। यह जानकारी अगर हमारे लोक सम्पर्क की भाषा में हो तो इसकी उपयोगिता और बढ़ जाती है। इसी दिशा में भारत की वनस्पति संबंधित जागरूकता एवं राजभाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार हेतु भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण प्रत्येक वर्ष **वनस्पति वाणी** नामक यह वार्षिक पत्रिका प्रकाशित करता है।

मुझे हर्ष है कि वनस्पति वाणी का 30 वां अंक भारतवासियों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। इस अंक में कुल 22 लेख शामिल किये गये हैं। जिनको 'वनस्पति विविधता', 'लोक वनस्पति विज्ञान', 'चिर परिचित वनस्पति', 'वानस्पतिक यात्रा', 'व्यक्तित्व', 'समसामयिक परिदृश्य', 'काव्यांजलि', 'पटाक्षेप' आदि शीर्षकों में बांटा गया है। मुझे आशा है कि वनस्पति वाणी का यह अंक लोगों को हमेशा की तरह रोचक एवं ज्ञानवर्धक साबित होगा। मैं इस अंक को लोक सेवा में समर्पित करता हूँ तथा लेखकों एवं सम्पादक मंडली के सफल प्रयास के लिए उनकी सराहना करता हूँ।

आवरण चित्र

अयनिका मुखर्जी
सेंट एन्थोनिस हाई स्कूल
चंदननगर

पार्श्व चित्र

आस्था पटनायक
केंद्रीय विद्यालय, ओ.एन.जी.सी
देहरादून

अनुक्रमणिका

वनस्पति विविधता

1.	पवित्र वन - जैव विविधता संरक्षण का एक प्राचीन तरीका	देबस्मिता दत्ता प्रमाणिक	1
2.	रानीखेत में जैविक और सांस्कृतिक विविधता का अंतर्संबंध	दामिनी शर्मा, दीपाक्षी बब्बर, कुसुम उपाध्याय, मंयक धर द्विवेदी, प्रियंका, संदीप कुमार चौहान	6
3.	झारखंड राज्य का पर्यावरण संरक्षण में योगदान	नवनीत कुमार दाँगी	9
4.	अदरक (जिन्जर) की नई जाति	लाल जी सिंह, चन्दन सिंह पुरोहित, गौतम अनुज एक्का एवं एम. चिन्ना केशावुलु नायक	12
5.	मुक्तेश्वर की पादप विविधता और उनके उपयोग की एक झलक	दीक्षा कुसुम उपाध्याय, दीपाक्षी बब्बर, दामिनी शर्मा, प्रियंका, शिवानी मिश्रा एवं संदीप कुमार चौहान	14
6.	अंडमान एवं निकोबार द्वीपसमूह में करौंदा की नई स्थानिक जाति	लाल जी सिंह, चन्दन सिंह पुरोहित, गौतम अनुज एक्का एवं फौज़िया सलीम	18
7.	भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान के पादप प्लवक, वृहत शैवाल और जलमग्न मैक्रोफाइटस	शिव कुमार	20

लोक वनस्पति विज्ञान

8.	*डेस्मोस्टेचिया बायपिन्नाटा* (एल.) स्टैफ – बिहार राज्य में छप्पर बनाने के लिए उपयोगी घास	ऐ. सी. हलदर, आर. सरवनन, पी. ऐ. ढोले एवं के अल्ताफ अहमद कबीर	25
9.	औषधीय पौधे - एक ऐतिहासिक अवलोकन	भैरव यादव	26
10.	बिहार की जन-जातियों द्वारा देशी पटुआ (*कॉर्कोरस ओलिटोरियस*) से रेशे निकालने की पारम्परिक विधि एवं उपयोग	पंकज ढोले, मोनिका मिश्र, आर. सरवनन एवं हरीश सिंह	29
11.	*मोमोरडिका कोचीनचाइनेनसिस* (लॉर) स्प्रेन्ज - एक महत्त्वपूर्ण औषधीय लता	फौज़िया सलीम एवं लाल जी सिंह	30

चिर परिचित वनस्पति

12.	बहुउपयोगी *वरनोनिया एमिगडेलिना* डेलिले (कड़वी पत्ती) का एक परिचय एवं संरक्षण	भावना जोशी और गिरिराज सिंह पंवार	31

वानस्पतिक यात्रा

13.	जिंगकिएंग जेरी - खासी जनजातियों की एक अद्भुत बायो-इंजीनियरिंग	जीवन सिंह जलाल	35

व्यक्तित्व

14.	महात्मा गांधी के पर्यावरण सम्बन्धी विचार	ललिता यादव एवं भैरव यादव	41

समसामयिक परिदृश्य

15.	वनस्पति विज्ञान एवं अध्यात्म	सौरभ सचान	43
16.	मध्यप्रदेश का रहस्यमय नरो पहाड़ के उष्णकटिबंधीय शुष्क वनों का पुनरुत्पादन व पुनर्वन्यकरण	दीप नारायण पाण्डेय्ेय, अच्युता नन्द शुक्ला एवं अर्जुन प्रसाद तिवारी	45

अनुक्रमणिका

17.	भारत में खाद्य अपमिश्रण	नितिषा श्रीवास्तव एवं शिंजिनी मुखर्जी	**48**
18.	वायुमंडलीय ऑक्सीजन के संतुलन में शैवाल की भूमिका	एस. के. यादव एवं के. मजूमदार	**52**
19.	विविध जलीय पौधों का भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान में गैर-स्थानिक संरक्षण	शिव कुमार	**54**
काव्यांजली			
20.	आओ मिलकर पेड़ लगाये	नितिषा श्रीवास्तव	**59**
21.	वसुधा सुंदरी	विभूति प्रकाश	**60**
पटाक्षेप			
22.	पर्यावरण संबंधी विविध जानकारियां	कैलाश प्रसाद कुशवाहा	**61**
23.	राजभाषा संबंधित महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन	कैलाश प्रसाद कुशवाहा	**62**
24.	राजभाषा प्रोत्साहन योजनाएं	राजभाषा अनुभाग	**64**
25.	लेखकों के लिए निर्देश	राजभाषा अनुभाग / प्रकाशन अनुभाग	**67**
26.	गतिविधियां (सचित्र)	प्रकाशन अनुभाग	**68**

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 01-05 (2021)

पवित्र वन - जैव विविधता संरक्षण का एक प्राचीन तरीका

देबस्मिता दत्ता प्रमाणिक

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, औद्योगिक अनुभाग, भारतीय संग्रहालय, कोलकाता

प्रकृति की उपासना मानव समाज का अभिन्न अंग है। प्रकृति की उपासना के विभिन्न रूप होते हैं और देवत्व किसी भी स्थान या प्राकृतिक तत्वों को सौंपा जा सकता है। प्रागैतिहासिक काल से ही प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण विविध संस्कृतियों से जुड़ा हुआ है। विभिन्न महाद्वीपों अर्थात अफ्रीका, यूरोप, अमेरिका, एशिया आदि में पवित्र वन की उपस्थिति उनकी अपनी संस्कृति, परंपराओं, लोकाचार आदि से स्पष्ट है। भारत में पूर्व-वैदिक काल से ही प्रकृति के संरक्षण की प्राचीन परंपरा रही है। पुराणों और महाकाव्यों से युक्त हमारी विरासत वनस्पतियों, जीवों, पहाड़ों, जंगलों, नदियों आदि से समृद्ध है।

आई.यू.सी.एन. द्वारा प्रदान की गई परिभाषा के अनुसार 'पवित्र वन' प्रकृति पूजा का एक रूप है और इसे "पवित्र प्राकृतिक स्थलों" के रूप में माना जाता है। यह कुछ पेड़ों के एक छोटे समूह से ले कर कई सौ एकड़ में फैले बड़े जंगल के आकार में वनस्पति के अलग-अलग टुकड़ें होते हैं जिन्हें स्थानीय देवताओं या पैतृक आत्माओं के नाम पर प्रतिष्ठित किया जाता है। स्थानीय लोगों द्वारा यह माना जाता है कि पवित्र उपवन में निवास करने वाले देवता ग्रामीणों को प्राकृतिक आपदाओं से बचाते हैं इसलिए किसी भी जीवित या गैर-जीवित चीजों को हटाना एक बड़ा गुनाह है। ये प्राचीन दैविक वन प्रकृति संरक्षण की सबसे मूल्यवान लेकिन आदिम प्रथाओं में से एक हैं और जैविक विविधता में समृद्ध हैं जो दुर्लभ जड़ी बूटियों और औषधीय पौधों सहित कई लुप्तप्राय पौधों की जातियों को आश्रय देते हैं। हर पवित्र वन अपनी किंवदंतियों और कल्पित कथा से जुड़ा हुआ है। पवित्र उपवन में पाई जाने वाली कुछ जातियां महत्वपूर्ण जातियां हैं, जो यह स्थान की जैव विविधता को बनाए रखते हैं। वे वायुमंडलीय आर्द्रता बनाए रखते हैं और तत्काल आसपास के तापमान को कम करके, कई जीवों के लिए अनुकूल माइक्रोक्लाइमेट का निर्माण करते हैं। पवित्र वन की पेड़ों की जड़ें मिट्टी और जल संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मानक नियम के अनुसार, 'पवित्र वन' को चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है अर्थात्: स्थानीय गांव के पवित्र वन (पूरे गांव द्वारा प्रबंधित किया जाता है जहां विभिन्न आदिवासी समुदाय रहते हैं), क्षेत्रीय पवित्र वन (मंदिर ट्रस्ट द्वारा संचालित है जहां विभिन्न जिलों के लोग आते हैं), अखिल भारतीय पवित्र वन (मंदिर ट्रस्ट द्वारा संचालित है जहां देश के कई हिस्सों से लोग आते हैं और देवता की पूजा करते हैं) और दफन वन (श्मशान घाट के आसपास बनाया जाता है)।

भारत में पवित्र वन की उत्पत्ति पूर्व-वैदिक है। उनमें से अधिकांश आदिवासी समुदायों के साथ जुड़े हुए है जो ज्यादातर प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों की दिव्यता में विश्वास करते हैं तथा स्पष्ट रूप से मूर्ति संबंधित मुख्य धर्मियो धारा से अलग है।

भारत में, 'पवित्र वन' का दस्तावेजीकरण होने की प्रक्रिया अभी भी चल रही है। वर्तमान भारत में, लगभग 13,270 पवित्र वन दर्ज

बांकुरा जिले के गांव का पवित्र स्थान

उत्तर 24 परगना के गौरांगनगर गांव में पवित्र पीपल का पौधा और संबंधित शिवकाली मंदिर

हैं, जिनमें से केवल 138 हेक्टेयर में पूरी तरह से अबाधित वनस्पति शामिल है और लगभग 3188 हेक्टेयर में एक खुली जगह है जहां कुछ गतिविधियों की अनुमति है। विशेषज्ञों का मानना है कि यदि उचित दस्तावेज पूरे हो जाते हैं, तो भारत में पवित्र वनों की कुल संख्या 100,000 से 150,000 तक हो सकती है। भारत में इन वनों का कुल अनुमानित क्षेत्रफल लगभग 33,000 हेक्टेयर है जो देश के कुल क्षेत्रफल का 0.01 प्रतिशत है। भारत में, उत्तर-पूर्वी हिमालयी क्षेत्र, पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, तटीय क्षेत्र, मध्य भारतीय पठार और पश्चिमी रेगिस्तान से 'पवित्र वन' का अच्छी तरह से दस्तावेजीकरण किया गया है। भारतीय पवित्र वनों अक्सर मंदिरों, मठों, तीर्थस्थलों या कब्रगाहों से जुड़े होते हैं। सी.पी. आर.पर्यावरण शिक्षा केंद्र के दस्तावेजीकरण के अनुसार भारत के राज्यों में पवित्र वनों का वितरण इस प्रकार है (तालिका 1):

तालिका 1: भारत के राज्यों में पवित्र उपवनों का वितरण (अमिर्थालिंगम, एम. 201। http://dx.doi.org/10.20546/ijcrbp.2016.304)

राज्य	संख्या	स्थानीय नाम	स्थानीय देवता	समुदाय द्वारा बनाए रखा गया	सामान्य पौधे
आंध्र प्रदेश	730	पवित्रक्षेत्रलू/ पवित्रावनम	शिव, रुद्रकोटेश्वर, हनुमान, सरस्वती, थिमराया स्वामी, गंगाम्मा, नागादेवता और अक्काम्मा	स्थानीय जनजाति	जामुन, इमली, आम, कटहल, नीम, पीपल, भोज वृक्ष
अरुणाचल प्रदेश	65	गुम्पा वन	उब्रो, उब्राम और थौ-ग्यू	लामा और मोम्पा जनजाति	बरगद, पीपल, अशोक, चमेली, हरड़
असम	40	थान, मैडिको	शंकर देव, सिबराई, अलु राजा, नाइखु राजा, वा राजा, गनियांग-ब्रेयुंग, हामीडाओ	बोडो, राभा, दिमासा	बांस, गुलाबी केला, मैक्सिकन काली मिर्च, सालसा, सुपारी, सैंड पेपर ट्री, उलट कम्बल
बिहार	43	सरनास	रक्सेल, दरहा, मारंग-बरू, जहर-बुरी, चंडी, धरती, सतबहिनी और जहेरारा	हाटुबोंगको	बांस, शाल
छत्तीसगढ	600	माटागुडी, देवगुडी, सरना, देवलास, मंदार और गाओंदेवी	समुदाय देवता	स्थानीय समुदाय	शाल, भारतीय आंवला, बहेड़ा, तेज़पत्ता, धूपम, हरड़, चिरंजी, मौवा, धवा
गोवा	93	देवराय, देवरान	दुर्गा माता और राष्ट्रोली	गावड़ा, कुनबी, वेलिप और धनगर-गौली	सीलोन ओक, सेमल, पीपल
गुजरात	42	ओरान माता और साध्य पिर	खोदियार माता, ओरान माता, झलाई माता, पंच कृष्ण, महादेवी	स्थानीय जनजाति	मैंग्रोव, कपास का पेड़, नीम, आम, बेल, पलाश, शीशम, बरगद, पीपल
हरियाणा	248	बीड, बानी	खेतनाथ, जयरामदास, शिव, बाला सुंदरी, नाव गाजा और मणि गोगा पीर	स्थानीय जनजाति	नाशपाती, मंदारिन, ब्रूसवॉर्ट, गार्डन वायलेट, एल्म, पीपल, बरगद, पलाश
हिमाचल प्रदेश	329	देव वन, देवता का जंगल, देव कोठी, बाखू देवबन	बाखू नाग देवता, रिंगारिषी देवता, देवी	बिरादरी पंचायतें, कारदार, पुजारी, भंडारी और गुरु	देवदार, कैल, ओक, तालीसपत्र:, स्प्रूस
जम्मू-कश्मीर	76	बैनिस	बाबा रोची राम, बुआ सजवती जी, बुआ दाती जी, भगवान हनुमान, माता वैष्णो देवी, पीर बाबा और राजा मंडलिक जी	धार्मिक निकाय या प्रबंधन समितियां	आम, बरगद, जामुन, कचनार, वरुण, पीपल, सफेद अंजीर, नीम, बेल

झारखंड	29	सरना, मंदार जहेरथान, मांझी थान, गमहेल	देवी माँ	मुंडारी, उरांव, संताली समुदाय समुदाय	जामुन, बेर, अर्जुन, तुलसी, भारतीय आंवला, नीम, आम, अरुषा, धतूरा, साल, चंपक
कर्नाटक	1476	देवकड़, कान, देवरकाडु, देवरकण	जाटकप्पा, भुटप्पा, चौदम्मा, मैलारा, भैरव और गोवर्धन	पारिवारिक स्वामित्व	गुंजा, अंकोल/ढेरा, नीम, पीपल, हरिनहर्रा, लाल पाउडर पफ पेड़
केरल	644	नागिन, भगवान अयप्पा, अय्यप्पन कावु, सस्थं कावु, भगवती कावु, अम्मन कावु, वनदेवता, चेरुम्बा और चीमा	सस्था, भगवती, सर्प कवु, अम्मन, कमलजय, मरिअई, भवानी, भगवती और तथावड़े	स्थानीय समुदाय या परिवार	दम्मर, चमेली, वार्निश पेड़, रंगून लता, नोगकेसर, सांता मारिया पेड़, इमली आदि
मध्य प्रदेश	100	देवगुडी, सरनास	बर्सुंग, पट खंडा, गंगनम्मा, महादेव, भंडारिन माता, दंतेश्वरी माता	गोंड, मुंडा, भरिया, भील आदि	महुआ, आक, बरगद, पीपल, जंगली कीकर, बेल, पलाश, साल
महाराष्ट्र	2820	देवराय, देवराहती, देवगुडी	मारुति, वाघोबा, वीरा, भिरोबा, खंडोबा, शिरकाई	स्थानीय समुदाय या परिवार	पार्श्वपिप्पल, कैसुरीना, सेमल, कपास का पेड़, तेज़पत्ता, चिलबिल, बकैन, महुआ, हल्दी, जापानी अदरक
मणिपुर	166	उमंग लाई, गमखाप, मौहाक	उमंगलाई, एबुधौ पखांगबा, कोंथौजम लैरेम्बी, चबुगबाम और चोथे थायई पखंगबा	गंगटे, गंगटे, ऐमोल, गुदा, चिरू, छोठे, इनपुई, हमार, खारम, खोइबू, कोइराव, कोम, लमकांग, लियांगमाई, माओ, मरम, मरिंग, मेट, मोनसांग, मोयन, पाइते, पौमई, पुरम, राल्ते, रोंगमेई, सिमटे, सुहते, तांगखुल, तारो, थडौ, थंगल, वैफेई, ज़ेमे और ज़ोउ	शिरीष, बांस, अंजीर
मेघालय	101	लाउ लिंगदोह, लाउ नियाम, किंतांग	बासा, लाबासा, रिन्केव, ख्लो ब्लाई,	व्यक्ति, कुलों या समुदाय, कबीले परिषद या स्थानीय गांव दोरबर्स	बांस, चिर पाइन, भोज पत्र, नाशपाती, पेरु बेलसम, कमल, चिरा बिल्व
मिजोरम	760	न्गवपुई, मावमुंड	रामहुई, लसी और चांगटिनलेरी	लुशाई, पावी, लखेर, हमार, पाइते, चकमास और राल्ते	बांस, बरगद, पीपल, नीम
ओडिशा	169	जहेरा, ठाकुरम्मा, देहुरी, कला आदि	झाकेरी, ग्राम सिरी, गोसा पेन्नू, पीताबल्दी, लोहा पेणु, गेसरी, पट बारम आदि	ओडिशा के आदिवासी समुदाय	साल, आम, चमेली, मदन मोगरा, बेल, जंगली पुदीना, धवा, बथुआ, नीम, सेमल
पुदुचेरी	123	कोविल कडुगल, अय्यप्पन कावु, कोविल कडु	सेलिअम्मन, कालियाम्मन, अय्यनार, पचैवाझियाम्मन, पोरैयथम्मन, मदुरैवेरन	आदिवासी समुदाय	शिरीष, भारतीय अटलांटिया, नीम, कंटारी, बुश प्लम, अमलतास, जामुन
राजस्थान	560	वाणी, ओरान, शामलात देह, देवबनी, केनक्रि	गरवाजी, भरथरीजी, नारायणी माता, पीरबाबा, हनुमानजी और नाहरशक्ति माता, देवनारायण	गुर्जर जनजाति	खैर, जंगली कीकर, गुग्गुल, कल्पतरु, नीम, बेर, बरगद, पीपल
सिक्किम	56	गुम्पा वन क्षेत्र (जी. एफ. ए.)	चो चूबा, लोकी शरीयत, गुरु पद्मसम्भव और रोलू देवी थान	लामा	कुप्रेसस, हिज्जला, थोत्ने

1. नदिया जिले के घोषपारा गांव में सती माता की मंदिर; 2. *अब्रास प्रिकेटरियस*; 3. *एगल मार्मेलोस*; 4. *फिलैन्थस एम्ब्लिका*; 5. *प्रसोपिस जूलिफ्लोरा*; 6. *साराका अशोका*

तमिलनाडु	1261	कोइल कडू, स्वामी थोपू या स्वामी शोलाई	सास्थ, अम्मान, आंवर, वेदप्पर, अयानार, मुनेश्वरन करपुस्वामी	तमिलनाडु के आदिवासी	गुंजा, सफेद बबूल, शिरीष, श्वेतखादिर, अमरफल, तेंदू, जंगली नींबू, नागकेसर, अंकोल, कैर, जंगली कीकर, शिरीष, कुपिला / नक्सवॉमिका, इमली, अमरीकी खजूर, कुरंजी, सफेद मरुध, जामुन ,अर्जुन, साइकास, रुद्राक्ष, चंपक, शीशम
उत्तराखंड	126	देव भूमि और बुग्याल	चंद्रबदनी देवी, हरियाली देवी, कोटगड़ी की कोकिला माता, प्रवासी पावासु देवता, देवराडा और सैमैयार	आदिवासी समुदाय	देवदार, रूट चेरविल, संजीवनी, कशमाल, छोटा सेब, टैगार, भारतीय वैलेरियन देवराडा
उत्तरप्रदेश	32	देव वैन और वैन	समे था, वनसत्ती देवी, भैरव बाबा, फूलमती माता, शिव, और राम जानकी	आदिवासी समुदाय	नीम, अमलतास, लसोड़ा, ईस्ट इंडियन शीशम, बरगद, चिलबिल/ करंज, गूलर, पीपल, नागकेसर, इंडिया जलाप/ पिथौरी
पश्चिम बंगाल	505	ग्रामथन, हरितन सबित्रिटन, जाहड़ा, देव तसरा और मावमुंड	तला, गरम, मनसा, देवीमणि और कालि माता	आदिवासी समुदाय	साल, बांस, आम, महुआ, नीम, जंगली खजूर, अल/ अची, भूत वृक्ष/ मंडुक

सामान्य पौधों के अलावा, पवित्र वन स्थानिक पौधों के जीन पूल के रूप में भी कार्य करते हैं जहां पाए जाने वाले विभिन्न स्थानिक पौधे इस प्रकार हैं: एसर लेविगेटम, एक्टिनोडाफ्ने बॉर्डिलोनी, अग्लैइया बरबेरी, एम्पेलोसिसस इंडिका, एनीलेमा ओवलिफोलियम, आर्टोकार्पस हिर्सुटस, असपिडोपटेरिस कैनारेंसिस, बेगोनिया कैनराना, कैलोफिलम कैलाबा, ड्रिमाइकार्पस रेसिमोसस, लिट्सिआ लैटा, फ्लेजेलारिया इंडिका, जेनिएन्थस लॉरीफोलियस, होपिया पोंगा, हिडनोकार्पस पेंटेंड्रा, मिकेलिया डेंटेटा, मोरिंडा रेटिकुलाटा, मिरिस्टिका फतुआ, मिरिस्टिका मालाबेरिका, स्ट्रोबिलैन्थेस सिलियाटस, साईज़ीजियम ट्रैवनकोरिकम, टिनस्पोरा साइनेसिस, वेटेरिया इंडिका आदि।

पवित्र वन - वर्तमान खतरों और इसके संरक्षण:

वर्तमान में पवित्र वन विभिन्न खतरों का सामना कर रहे हैं जिनमें से विखंडन तथा निम्नीकरण, अधिक चराई, प्राकृतिक संसाधनों का अतिदोहन, शहरीकरण, पारंपरिक विश्वास का कमी, विदेशी जातियां, जनसंख्या विस्तार, माइक्रॉक्लाइमेट में बदलाव, सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन, संस्कृतिकरण, पवित्र स्थानों में पर्यटन का विकास, प्राकृतिक आपदाएं आदि प्रमुख हैं। पवित्र वनों मैं पाए जाने वाले पादप जातियां तथा इनके सांस्कृति विरासत को आज उचित संरक्षण की आवश्यकता हैं।

हाल के दिनों में, खासकर जैविक विविधता पर कन्वेंशन (सीबीडी) की घोषणा के बाद, प्रकृति संरक्षण का महत्व कई गुना बढ़ गया है। समुदाय आधारित संरक्षण सीबीडी के प्रमुख एजेंडा में से एक है जिसके लिए पवित्र वन परंपरा को रोल मॉडल के रूप में चित्रित किया जा सकता है। बिना किसी वित्तीय सहायता के पवित्र वन, समुदाय आधारित प्रकृति संरक्षण के लिए एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है। जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के संरक्षण की दिशा में अपने अमूल्य योगदान के कारण, पवित्र वन परंपरा इसकी संरक्षण गतिविधियों को कई गुना बढ़ावा देती है। विलुप्त होने के खतरे से प्राकृतिक संरक्षित वन परंपरा की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय निकायों ने विभिन्न उपाय किए हैं। भारत में, इन वनों को विलुप्त होने से बचाने के लिए राज्य के वन विभाग, गैर सरकारी संगठन (एनजीओ), ग्राम स्तरीय समितियां, शिक्षाविद और शोधकर्ता काम कर रहे हैं। संरक्षण गतिविधियाँ मुख्यतः तीन प्रकार की होती हैं: (क) ग्रामीणों की मौजूदा संरक्षण गतिविधियों को मजबूत करना; (ख) खतरे वाले पवित्र वन की उद्धार और (ग) परिदृश्य स्तर में दृष्टिकोण। यह स्पष्ट है कि, इस पवित्र वन को केवल आध्यात्मिक विश्वास के आधार पर संरक्षित नहीं किया जा सकता है। पवित्र वनों के संरक्षण के महत्व के बारे में ग्रामीणों और आसपास रहने वाले समुदायों के बीच जागरूकता बढ़ाने के लिए ठोस कदम उठाने होंगे, संरक्षण में शामिल लोगों को प्रोत्साहन राशि प्रदान कर के प्रोत्साहित किया जा सकता है। यह महसूस किया गया है कि पारंपरिक ज्ञान-आधारित प्रणाली अर्थात स्थानीय विश्वास प्रणालियों को विकास कार्यक्रमों का समावेशी हिस्सा बनाया जाना चाहिए ताकि स्थानीय जनता खुद को इस संरक्षण प्रणाली से जोड़ सके।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 06-08 (2021)

रानीखेत में जैविक और सांस्कृतिक विविधता का अंतर्संबंध

दामिनी शर्मा, दीपाक्षी बब्बर, कुसुम उपाध्याय, मंयक धर द्विवेदी, प्रियंका, संदीप कुमार चौहान

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा

धरती पर जीवन की विविधता का कारण जैविक और सांस्कृतिक विविधता में संबंध है क्योंकि पारंपरिक जीविका और मानव अस्तित्व प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करते हैं। रानीखेत इस संबंध को दर्शाने के लिए उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह रचना उदाहरण सहित यह दर्शाती है कि कैसे वहां के लोग अपनी संस्कृति और परंपरा से जुड़े हुए हैं। उनका वनस्पतियों के बारे में ज्ञान, कैसे उनका उपयोग दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने में साथ ही साथ आजीविका बनाने के लिए करती है।

उत्तराखंड राज्य के अल्मोड़ा जिले में रानीखेत एक हिल स्टेशन है । यह सैन्य अस्पताल, कुमाऊं रेजिमेंट और नागा रेजिमेंट का मुख्यालय है तथा इसका रखरखाव भारतीय सेना द्वारा किया जाता है। रानीखेत का मतलब हिंदी में रानी की तृणभूमि है, इसका नाम एक स्थानीय किंवदंती से मिलता है, जिसमें कहा गया है कि राजा सुधरदेव ने अपनी रानी "रानी पद्मिनी" का दिल जीत लिया था, जिसने बाद में इसे रानीखेत नाम दिया। हालांकि इस क्षेत्र में कोई महल मौजूद नहीं है।

1869 में, अंग्रेजों ने यहां कुमाऊं रेजिमेंट का मुख्यालय स्थापित किया औ यह स्टेशन भारतीय पर्यटकों द्वारा भीषण गर्मी में छुट्टीयाँ मनाने के लिए एक प्रसिद्ध स्थल है। रानीखेत पहले नेपाली शासन के अधीन था और कुमाऊँनी ने अपने समर्थ जनरल काशी नाथ अधिकारी के नेतृत्व में इसे जीता था - जिसके बाद काशीपुर का नामकरण हुआ।

जैव विविधता सभी जीवित जीवों, उनकी आनुवंशिक सामग्री और पारिस्थितिक तंत्र को संदर्भित करती है, जिसका वे एक हिस्सा हैं। यह आमतौर पर 3 स्तरों पर वर्णित है: आनुवंशिक, प्रजातियां और पारिस्थितिकी तंत्र। सांस्कृतिक विविधता विविध या विभिन्न संस्कृतियों की गुणवत्ता को दर्शाता है। वाक्यांश "सांस्कृतिक विविधता" कभी-कभी एक विशिष्ट क्षेत्र में या दुनिया भर में मानव समाजों या संस्कृतियों की विविधता को दर्शाती है।

यह मान्यता है कि जीवन की विविधता में जैविक और सांस्कृतिक विविधता दोनों शामिल हैं। कृषि समुदायों और स्वदेशी संस्कृतियों के विविधता और पारंपरिक ज्ञान का विलोपन जैविक विविधता में कमी से आंतरिक रूप से जुड़ा हुआ है। स्वदेशी लोग और कृषक समुदाय जैविक ज्ञान और संसाधनों के निर्माता, संरक्षक और निरंतर नवप्रवर्तनकर्ता हैं। समाज, संस्कृति और भाषा की विविधता जो पूरे मानव इतिहास में विकसित हुई है, जीवन विकास क्षमता की अभिव्यक्ति है। संस्कृतियों में अंतर, दूसरे शब्दों में, सांस्कृतिक विविधता और जैविक विविधता एक-दूसरे से संबंधित हैं। अगर हम इसके बारे में सोचते हैं तो यह समझ में आता है कि मनुष्य ने अपने जीवन को विशेष वातावरण के अनुसार अनुकूलित किया है।

जैव विविधता से निम्रित उत्पाद- खजूर की पत्तियों से बनी झाड़ू, हस्तनिर्मित उत्पाद दृश्य जो काई से बनाए गए

रानीखेत की जैव विविधता और सांस्कृतिक विविधता के बीच संबंध का अध्ययन 3 पहलुओं को ध्यान में रखकर किया गया है: -

हस्तशिल्प, कपड़े और औषधीय मूल्य

फलों से जैम, अचार, चटनी आदि के उत्पाद जो स्थानीय लोगों द्वारा तैयार किए जाते हैं

हस्तशिल्प में वे वस्तुएं शामिल हैं जिनका निर्माण बड़े पैमाने पर उत्पादन विधियों और उपकरणों के स्थान पर सरल साधनों का उपयोग करके हाथ से किया जाता है। रानीखेत में रहने वाले लोगों की आजीविका का साधन काफी हद तक उनके आसपास की जैव विविधता पर ही निर्भर है। जैव विविधता न केवल आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। दैनिक घरेलू जरूरतों की पूर्ति के लिए लोग खजूर के पेड़, बांस के पेड़, विलो पेड़, सागवान और चीड़ (पाइन) का उपयोग करते हैं। खजूर के पेड़ का उपयोग झाड़ू बनाने के लिए किया जाता है, जिसका उपयोग सफाई के उद्देश्य से किया जाता है। वहीं, टीक की लकड़ी का उपयोग निर्माण के उद्देश्य से किया जाता है, जैसे दरवाजे और खिड़कियां बनाने के लिए।

मूल वनस्पतियों का उपयोग लोग अपनी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए करते हैं उदाहरणार्थ विभिन्न हस्तनिर्मित उत्पादों को बनाने में। इसमें बांस के चम्मच, सजावटी लैंप शेड्स, ब्रूमस्टिक, ऊनी कपड़े इत्यादि शामिल हैं। विलो के पेड़ की लकड़ी का उपयोग बल्ला और हॉकी बनाने के लिए किया जाता है। चीड़ वृक्ष के लम्बे और पतले सूच्याकार पत्तों का इस्तेमाल साड़ी बनाने में किया जाता है।

चारों ओर जैव विविधता महिला सशक्तीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। यह "उमंग" को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है। उमंग समुदाय आधारित स्वामित्व वाला उद्यम है जो पारिस्थितिकी, समानता और अर्थशास्त्र के सिद्धांतों पर टिका है। उमंग कमजोर/गरीब व्यापार उद्यमों की स्थापना के लिए मंच प्रदान करता है जो सीधे पान हिमालयन ग्रासट्रोट्स डेवलपमेंट फाउंडेशन द्वारा नियंत्रित होते हैं। इसमें उपभोक्ताओं की आय का बड़ा हिस्सा निर्माता समूह तक पहुंचता है जो "फेयर ट्रेड" के सिद्धांत से प्रेरित है। उमंग का यह मानना है कि जो लोग उनकेउत्पादों को खरीदते हैं वे सीधे गरीब परिवारों को "व्यापार और सहायता नहीं" के माध्यम से सहायता करते हैं। उमंग में घर से उत्पादों की टोकरी के स्वरूप हाथ से बुना हुआ ऊनी कपड़े से लेकर फलों के मुरब्बे और अचार, प्राकृतिक शहद, पारंपरिक मसाले, अखरोट और जैविक खाद्यान्न की एक पूरी श्रृंखला है। उमंग के सभी उत्पादों की मार्केटिंग कुमाउनी और हिमखेडा के ब्रांडों के तहत की जाती है।

कपड़े एक महत्वपूर्ण पहलू हैं जो हमें विभिन्न समुदायों को अलग करने में सक्षम बनाता है। रानीखेत कुमाऊँनी में प्रमुखता से बसा हुआ है, जो उनकी ड्रेसिंग शैली से बहुत अधिक विस्तृत है। शहरों में रहने वाले लोगों के विपरीत, यहां लोग अपनी संस्कृति और परंपरा से बहुत जुड़े हुए हैं और वे मामूली बदलाव के साथ अपनी मूल शैली को बढ़ावा दे रहे हैं।

पुरुष चूड़ीदार पायजामा, कुर्ता, टोपी और एक कोटी पहनते हैं जबकि महिलाएं घाघरी के रूप में जानी जाने वाली लंबी स्कर्ट पहनती हैं जिसे चोली और ओढनी के साथ पहना जाता है। स्थानीय लोगों की प्रथागत दुल्हन की पोशाक घाघरा लहंगा और चोली और पिछोरा घाघरा है। पिछोरा या रंगवाली को सिल्वर और गोल्ड धातु के साथ पिरोकर डिज़ाइन किया जाता है। विवाहित महिलाएं चेरु नामक काले मंगलसूत्र को धारण करती हैं। उनकी संस्कृति में, बाएं नथुने पर पहना जाने वाला नथ (बड़ी अंगूठी) एक प्रमुख भूमिका निभाता है। नथ कुमाऊँनी महिला की पारंपरिक पोशाक का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हालांकि, अब युवाओं में पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव देखा जा सकता है।

प्राचीन काल से औषधीय पौधों का उपयोग रानीखेत के स्थानीय लोगों द्वारा किया जाता रहा है। यह जड़ी बूटियां रोगों की रोकथाम के लिए विशेष रूप से प्रयोग होती हैं। औषधीय पौधों में विशेषतौर पर उनके ऊतकों या बीजों में आवश्यक तेल और तत्व होते हैं जो बैक्टीरिया, मोल्ड या अन्य रोगाणुओं को बढ़ने से रोकते हैं। वहीं मनुष्य आमतौर पर अनेक पौधे की प्रजातियों को मसालों के रूप में इस्तेमाल करते हैं जिसमें उच्च आवश्यक तेल और तत्व मोजूद होते हैं, जो बैक्टीरिया या अन्य रोगाणुओं द्वारा भोजन को रोगग्रस्त होने से बचाने में मदद करते हैं।

रानीखेत में विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधे हैं, जिनका उपयोग क्षेत्रीय समुदायों द्वारा किया जा रहा है और साथ ही सरकार जगह-जगह नर्सरी की स्थापना करके इसका व्यावसायीकरण भी कर रही है। कालिका नर्सरी, कालिका शहर में स्थित है, जो देवी कालिका के प्रसिद्ध मंदिर से अपना नाम आकर्षित करती है। इस नर्सरी में अश्वगंधा, सर्पगंधा, रोडोडेंड्रॉन जैसे ढेरों औषधीय पौधों का विशाल रोपण है।

रानीखेत के नृवंशीय पौधों का सर्वेक्षण किया गया है और जिसमें 19 प्रजातियों के पारंपरिक ज्ञान को एकत्रित किया गया है। इन पौधों की प्रजातियों का उपयोग स्थानीय लोगों द्वारा पारंपरिक औषधीय प्रणाली में किया जाता है। नृवंशविज्ञान (एथनोग्राफी) विज्ञान की वह शाखा है जो रोगाणुनाशी गुणों को बताती है, इनकी जानकारी स्थानीय लोगों विशेष रूप से महिलाओं और गाइड जैसे अनुभवी लोगों- लक्ष्मण सिंह और गोवर्धन के साक्षात्कार द्वारा संग्रहित की गई हैं।

क्लोरोफाइटम बोरिविलियनम (एस्पेरेरेगेसि) जिसे सफेद मुसली कहा जाता है, वे इसे शारीरिक कमजोरी, प्रसव, प्रसवोत्तर समस्याओं के उपचार के लिए प्रयोग करते हैं। इसे प्रतिरक्षा में सुधार करने वाले कारक के रूप में उपयोग किया जाता है। यह कामोद्दीपक कारक और जीवन रक्षक की तरह काम करता है। गठिया और मधुमेह के लिए सफेद मुसली रामबाण है। एलो बारबाडेन्सिस (लिलिएसी) एलोवेरानाम से प्रचिलित है। यह कूलिंग और मॉइस्चराइजिंग एजेंट का बेहतरीन विकल्प है। आयुर्वेद में विरेचक प्रभाव और दर्दनिवारक के रूप में प्रयोग का उल्लेख मिलता है। एमरन्थस विरीडिस (अमरेन्थेसी) चौलाई को प्रदाह-शामक लेप के स्वरुप प्रयोग में लाया जाता है। श्वेत प्रदर और कुष्ठरोग में चौलाई असरदार है। भारत में ही नहीं बल्कि सभी देशों में हर आयु की महिलाएं श्वेत प्रदर रोग से ग्रस्त पाई जाती हैं। बवासीर के उपचार और रक्त शोधक के रूप में किया जाता है। एस्परैगस फिलीसीनस, शतावरी को कायाकल्प टॉनिक के रूप में अनेक वर्षों से उपयोग किया जा रहा है। बेरबेरिस एरिस्ताता (बर्बरीडेसी) जिसे स्थानीय निवासी चित्रा कहते है। बवासीर और मधुमेह के उपचार में उसे अवश्य रखा जाता है। यह पेट के अल्सर में भी उपयोगी है। कैनेबिस सटाइवा (कैनाबिनेसी), भांग को उचित मात्रा में लेने से दर्द से छुटकारा मिलता है। वहीं अनिद्रा रोग से पीड़ित जो आखिर में अवसाद से ग्रस्त हो जाते हैं उन्हें भांग दी जाती है। सिनमोमम तमाला (लौरेसी),तेजपत्ता अस्थमा, खांसी और अपच के इलाज के लिए हमेशा से प्राथमिक उपचार के लिए दिया जाता रहा है। कर्कुमा अरोमैटिका (जिंगीबरेसी), जंगली हल्दी चहरे मुँहासे के लिए और पेट की समस्याओं के लिए उपयोगी है। अस्थमा और जोड़ों के दर्द से राहत पहुंचाता है। एक्लिप्टा अलबा (एस्टैरैसी), भृंगराज सिरदर्द से निवारण के लिए; रूसी से राहत पाने के लिए; अभ्यस्त गर्भपात और गर्भपात को रोकने के लिए महिलाओं द्वारा उपयोग किया जाता है। एलेउसिन कोराकाना (पोएसी), मंडुआ गर्भावस्था के बाद महिलाओं के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने जिसमें विशेष रूप से हड्डियों की मजबूती में मदद करता है। गुर्दे की पथरी को ख़त्म करने के लिए पथर चटा, कैलेंचो पिन्नाता (क्रेसुलेसी) और गहथ की दाल, मैक्रोटाइलोमा यूनिफ़्लोरम (फैबेसी) का सेवन किया जाता है। प्रूनस आर्मेनिका (रोजेसी), खुबानी बच्चों में वजन बढ़ाने में मदद करता है। राउवोल्फिया सर्पेंटिना (ऐपोसाइनेसी), सर्पगंधा को साँप के काटने, कीट के डंक और मानसिक विकारों से राहत पाने के लिए उपयोग किया जाता है। उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करने के लिए भी यह मददगार है। रोडोडेंड्रोन आरबोरेटम (एरिकेसी), बुरांस भीषण गर्मी के दौरान कूलिंग एजेंट के रूप में लाभकारी है। हृदय विकारों और मधुमेह के इलाज में चिकित्सक द्वारा उपयोग किया जाता है। कैंसर के इलाज के लिए सोलेनम अकुएलेयास्ट्रम (सोलेनेसी) जिसे सोडा सेब और कथरी भी कहते हैं उपयोग में लाया जाता है। वहीं यह दाद और दांत से संबंधित बीमारियों के लिए भी लाभदायक है। अर्टिका डाइयोइका (अर्टीकेसी), बिचू घास जोड़ों के दर्द को ठीक करने के लिए सहायता करती है। रक्त परिसंचरण में वृद्धि और उल्टी का इलाजभी बिच्छु घास से यथासंभव है। विदानिया सोम्निफेरा (सोलेनेसी)), अश्वगंधा से काले मोतियाबिंद में राहत मिलती है। जेंथोजाइलम एलेटम (रूटेसी)), तैमूर दांत की दवा के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

रानीखेत जैवविविधता और सांस्कृतिक विविधता के बीच एक बहुत अच्छा संबंध प्रस्तुत करता है। यह वनस्पतियों और जीवों के संदर्भ में बहुत विविध है। यह कुमाउनी लोगों द्वारा प्रमुख रूप से बसा हुआ है जो अभी भी अपनी संस्कृति और परंपरा से जुड़े हुए हैं और वे प्रकृति का सम्मान करते हैं। रानीखेत के लोग आसपास की वनस्पतियों के बारे में बहुत अच्छी तरह से जानते हैं और वे इस का उपयोग कई उद्देश्यों के लिए अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ अपनी आजीविका चलाने के लिए करते हैं। एक अटूट बंधन है जो लोगों और उनके आसपास की जैवविविधता के बीच मौजूद है, जो उनकी प्रथाओं में परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए- सतावर का उपयोग कायाकल्पटॉनिक के रूप में और शरद पूजा में तीमाल का उपयोग आदि। इस प्रकार, जैवविविधता उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और जैवविविधता के बिना उनके जीवन जीने के तरीके की कल्पना करना असंभव है क्योंकि यह उनकी औषधीय उद्देश्य, भोजन और धर्मप्रथाओं में अंतर्निहित है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 9-11 (2021)

झारखंड राज्य का पर्यावरण संरक्षण में योगदान

नवनीत कुमार दाँगी

विनोवा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

झारखंड की सभ्यता और संस्कृति अभिन्न रूप से जल,जंगल और जमीन से जुड़ा हुआ है। झारखंड की कल्पना बिना जंगल के अधूरा है। यहां के लोगों का जंगल के साथ रिश्ता सदियों से काफी गहराई से जुड़ा हुआ है।यहां के सभी पर्व त्यौहार कहीं ना कहीं प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण का संदेश देते हैं। इसके साथ-साथ यहां आदिवासी मूलवासी के जीविका के साधन भी अभिन्न रूप से वनों के साथ जुड़ा हुआ है। यहां के निवासियों की अर्थव्यवस्था वनों के साथ जुड़े होने के बाद भी उन्होंने कभी भी वन पर्यावरण का नुकसान नहीं पहुंचाया है बल्कि इसके विपरीत हर संभव पर्यावरण के संरक्षण के बारे में ही सोचा।चाहे वह सरहुल, सोहराय या करमा पर्व हो या अन्य कोई पर्व त्यौहार सभी पर्यावरण संरक्षण का ही संदेश देते हैं। वृक्षों की पूजा झारखंड वासी सदियों से करते चले आ रहे हैं। इसके साथ-साथ पशु-पक्षी, नदी व पहाड़ों की भी पूजा का प्रचलन प्राचीन काल से ही रहा है। यहां पर निवास करने वाले आदिवासी सदियों से जंगलों में निवास करते आए हैं और उनका प्रिय निवास स्थान भी जंगल ही रहा है कुछ आदिम जनजातियां आज भी जंगलों में ही रहना पसंद करती है और वनों से प्राप्त कंदमूल औषधि व अन्य वन उत्पाद से अपना जीविकोपार्जन करते हैं । लेकिन वर्तमान समय में अंधाधुंध जंगलों की कटाई और खनन के कारण लगातार झारखंड में वनों का प्रतिशत घटता चला जा रहा है जिससे आदिवासी जीवन और संस्कृति पर गहरा संकट आ गया है। साथ ही वर्तमान समय में पर्यावरण के समक्ष गंभीर चुनौतियां हैं। असमय वर्षा निरंतर बढ़ता तापमान,पिघलते ग्लेशियर विलुप्त होते पशु-पक्षी व अन्य पर्यावरणीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। अतः वर्तमान समय में झारखंड की सभ्यता संस्कृति जो पर्यावरण संरक्षण का संदेश देती है अपने आप में अनूठा है। जिसके लिए आज हम लोग इतने गंभीर हैं सदियों से ही झारखंड वासियों पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक रहे हैं।

झारखंडी संस्कृति और पर्यावरण

झारखंड की संस्कृति सदियों से वन एवं पर्यावरण पर आधारित रहा है झारखंड के नाम का अर्थ ही झाड़ अर्थात वन और खंड अर्थात प्रदेश इस प्रकार झारखंड का शाब्दिक अर्थ वन का प्रदेश है। नाम के अर्थ के अनुसार ही यहां के लोगों का जीवन संस्कृति सभी वन से काफी गहरे से जुड़ा है। झारखंड की संस्कृति में पर्यावरण के प्रति समर्पण स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है झारखंड के विभिन्न समुदायों के द्वारा मनाए जाने वाले पर्व त्यौहार सभी प्रकृति के साथ ही जुड़ा हुआ है। सदियों से यहां के निवासी वृक्षों की पूजा पशु पक्षियों की पूजा पहाड़ों की पूजा करते चले आ रहे हैं जो पर्यावरण संरक्षण का भी प्रतीक है। मुख्य तौर पर झारखंड के सभी धर्म प्रकृतिवाद पर आधारित है जिसमें वृक्ष की पूजा नदियों की पूजा पहाड़ों की पूजा पशु पक्षियों की पूजा की प्रधानता है। झारखंड में कई तरह के पर्व त्यौहार मनाए जाते हैं जो प्रकृति से जुड़े हुए:-

सरहुल:

सरहुल झारखंड के प्रमुख पर्व में से एक है | यह चैत्र के शुक्ल पक्ष की तृतीया को मनाया जाता है। यह मूल रूप से प्राकृतिक आराधना का पर्व है। वसंत ऋतु के समय साल के वृक्षों पर नए फूल खेलने की खुशी में इसका आयोजन होता है। साल के वृक्ष में फूलों का आना इस त्यौहार का घोतक है। इस पर में मुख्य रूप से साल के वृक्ष की डाली और उसके फूल को सरना स्थान में ले जाकर इसका पूजा किया जाता है। इस पर्व को गांव के प्रधान पुजारी पहान के द्वारा संपन्न किया जाता है। इस पर्व में भरपूर उत्पादन की कामना की जाती है और प्रतीक के रूप में सूर्य आकाश का विवाह धरती के साथ कराया जाता है। साथ ही आदिवासी समुदाय के द्वारा संगीत और नृत्य का आयोजन भी किया जाता है। मूल रूप से सरहुल झारखंड का एक पर्व ही नहीं बल्कि गौरवशाली प्राकृतिक धरोहर का प्रतीक है। स्पष्ट है कि यह पर्व जंगलों के प्रति जनजातियों के लगाव का प्रतीक है।

सोहराय:

आदिवासियों में सोहराय पर्व का विशेष महत्व है जो पशु संरक्षण का संदेश देती है। इस पर्व को गोवर्धन पूजा का पर्व भी कहा जाता है इसमें विशेषकर गाय बैल की पूजा की जाती है। आदिवासियों में इस पर्व की उत्पत्ति के विषय में काफी रोचक कथा मिलती है। कथा के

अनुसार जब मृत्यु लोक में मानव की उत्पत्ति हुई तो उनके बच्चों के लिए दूध की कमी होने लगी इस पर मरंगबुरू अर्थात शिव जी ने विभिन्न प्रकार की गायों की उत्पत्ति कर पृथ्वी पर भेजा जिससे मनुष्य के बच्चों को दूध मिला। इसके बाद ही आदिवासियों में गाय और बैल की पूजा प्रारंभ की। वस्तुतः यह पांच दिनों का पर्व है जिसमें पहला दिन स्नान के बाद गोड टांडी (बाथान) भेजो हरेरा का आवाहन किया जाता है साथ ही हंडिया के साथ नृत्य संगीत का आयोजन किया जाता है और रात में युवक युवतियां धूप दीप के साथ गो पूजन करते हैं। दूसरे दिन हल की पूजा होती है जिसमें गौशाला को साफ करके उसमें अल्पना के द्वारा सजाया जाता है गायों के पैर धोए जाते हैं साथ ही उनके सिंघों में सिंदूर और तेल लगाया जाता है। तीसरे दिन सभी लोग अपने अपने पशुओं को धान की बाली तथा माला आदि से सजाकर उसे खुटते हैं तथा गाजा बाजा के साथ सामूहिक रूप से भटकाते हुए घंटा दो घंटा नाचते - कूदते हैं उसके बाद पशुओं को पुनः गोहाल में ले जाते हैं। चौथे दिन युवक-युवतियों का दल प्रत्येक घर में जाकर थोड़ा चावल-दाल, नमक मसाले इत्यादि इकट्ठा करते हैं और पांचवें दिन इन उपर्युक्त चीजों से खिचड़ी पकाते हैं और सह भोज का आयोजन करते हैं।

करमा:

करमा पर्व सदनों एवं आदिवासी दोनों में काफी लोकप्रिय है। करमा पर्व भी भाई-बहन के प्रेम के साथ साथ प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण का संदेश देती है। यह पर्व भाद्र मास के एकादशी के दिन मनाया जाता है। इसमें करम की वृक्ष की दो डाली आंगन में गाड़ कर पूजा की जाती है। इसके बाद दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व ही कर्म की डाली को निकटतम नदी अथवा तालाब में विसर्जित कर दिया जाता है।

बुरू पर्व:

यह विशेष रूप से मुंडा जनजातियों के द्वारा मनाया जाने वाला पर्व है जिसमें बुरु अर्थात पर्वत की पूजा की जाती थी। अगहन मास में सबसे पहले "मरंगबुरू"(सबसे बड़ा पहाड़) की पूजा होती है। प्रत्येक क्षेत्र की जनजातियों का अपना एक अलग मारंग बूरू होता है। बाद में इस पर्व को अन्य जनजातियों के द्वारा भी मनाया जाने लगा। इस पर्व में पाहन पहाड़ देवता को हड़िया अर्पित करता है। यह पर्व तीन दिनों में मनाया जाता है जिसमें पहले दिन सखुआ की पत्तियां तोड़ी जाती है और सरना की सफाई की जाती है दूसरे दिन उपवास रखा जाता है और तीसरे दिन पूजन होता है।

इसके साथ ही अन्य कई पर्व पर्यावरण के साथ जुड़े हुए थे | जैसे एरोक बीज बोने का त्योहार था जो आषाढ़ मास में मनाया जाता था। हरियाड पर्व धान की फसल की हरियाली के कामना के लिए मनाया जाता था साथ ही अच्छी फसल के लिए कामना भी की जाती थी। आदिवासियों के अधिकतर पर्व कहीं ना कहीं प्रकृति से जुड़े हुए हैं। इनके धार्मिक देवी देवता भी ज्यादातर जंगलों में निवास करते हैं इसलिए तकरीबन हर आदिवासी पर्व त्यौहार जंगल पर आधारित होते हैं। धार्मिक कर्मकांड या पर्व त्योहर सबमें सखुआ, करम, टिसू, पीपल, बरगद, समेल जैसे पेड़ के पत्ते फूल फल व टहनियों का इस्तेमाल किया जाता है। झारखंड में आज भी बहुत से समुदाय की रोजी-रोटी जंगलों पर ही टिकी हुई है इसलिए झारखंड में जंगल का मतलब केवल पेड़ पौधे की पूजा तक ही नहीं बल्कि इसकी कई राजनीतिक सांस्कृतिक और आर्थिक मायने भी है। स्थानीय लोगों की प्रकृति के साथ सदियों पुरानी निकटता और निर्भरता ने जंगल को लोक व्यवहार का हिस्सा बना दिया है यहां तक कि आदिवासियों के मुख्य देवी देवता भी जंगलों से ही निकले हैं। इसलिए सदियों से लेकर निरंतर आज तक भी जंगलों के साथ इनका रिश्ता काफी गहरा है। झारखंड में जितने भी जनजातीय विद्रोह हुए हैं उस में अधिकतर विद्रोह जल जंगल और जमीन पर अपने हक की रक्षा के लिए हुए हैं।

आदिवासियों में साल वृक्ष के पेड़ को काफी पवित्र माना जाता है ऐसी मान्यता है कि इनकी प्राकृतिक देवी माता सरना इस पेड़ पर ही वास करती है। ऐसी मान्यता है कि माता सरना की कृपा से ही अच्छी बारिश फसलों को पानी, जल, जंगल, पहाड़ नदी-नाले, मनुष्य, जंतु, पक्षी सभी का अस्तित्व कायम है और पूरी सृष्टि को माता सरना ही नियंत्रित करती है। इनका कोई भी पर्व त्योहार साल के फूल और पत्ते के बिना पूरा नहीं होता है। जब झारखंड के आदिवासियों ने किसी भी प्रकार के विद्रोह को खड़ा किया तब विद्रोह को संगठित करने के लिए साल के डाली का प्रयोग किया गया। संथाल हूल में सिद्धो- कान्हो ने हर गांव में संदेश पहुंचाने हेतु साल के डाली का ही प्रयोग किया था। इसके अलावा इस वृक्ष के कई औषधीय गुण भी है इसके छाल कई रोगों को ठीक करने के काम में लाया जाता है आयुर्वेदिक दवाइयां बनाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है विशेषकर साल वृक्ष के फल सरई का तेल निकाला जाता है और कई प्रकार की दवाई बनाने में इसका इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा साल वृक्ष के पत्ते से पत्तल दोना आदि विभिन्न प्रकार की वस्तुएं बनाई जाती है और इसे स्थानीय बाजार में बेचा

जाता है। इस प्रकार के पत्तल और दो ना पर्यावरण को किसी भी तरह से नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। इस प्रकार साल वृक्ष झारखंड के लोगों की सांस्कृतिक धार्मिक पहचान के साथ-साथ लाखों लोगों को रोजगार और आजीविका के साधन को भी उपलब्ध कराता है।

इसके साथ-साथ झारखंड के नृत्य संगीत चित्रकला आदि सभी कहीं न कहीं पर्यावरण संरक्षण का ही संदेश देते हैं। आदिवासियों के द्वारा गाया जाने वाला लोकगीत भी प्रकृति और पर्यावरण प्रेम का ही संदेश देती है:-

टिल्ह-टूंगरिया में, बुनलों कपास
सुन सांवरी लो, फूलो-फरे झबरलई डाईर
कोंहों कपास फुटाये, कोहों कपास फोरये
सांवरी लो, कोहों कपास उडी-उडी जाई

बिछी- बिनी आइनबई, धुनकी से धुनबई
सांवरी लो, सुता काटी साड़ियाँ बुनाईब
बतासे उड़ये फुटले कपास
सांवरी लो, धाइन कपास भरम बंचाई |
सांवरी लो,धाइन कपास भरम बंचाई।

इस प्रकार आदिवासियों के विभिन्न लोकगीत प्रकृति, फसल, पशु आदि से जुड़े हुए हैं और इनका संरक्षण का संदेश इं गीतों के द्वारा मिलता है।आदिवासियों के द्वारा की जाने वाली चित्रकारी मैं भी विशेष रूप से पशु पक्षी ही मुख्य विषय वस्तु होती है जिससे पशुओं के प्रति संरक्षण वह लोगों में जागरूकता का भाव उत्पन्न होता है। साथ ही विभिन्न आदिवासियों के गोत्र पशु-पक्षी, पेड़-पौधे के नाम पर ही रखा गया है। जिस समुदाय का जो गोत्र होता है उसे उस समुदाय में मारना या उसे नुकसान पहुंचाना निषिद्ध है इस प्रकार से भी कहीं ना कहीं पर्यावरण संरक्षित होती है। इस प्रकार झारखंडी संस्कृति का मूल ही कहीं ना कहीं प्रकृति और पर्यावरण पर ही आधारित है। यहां के निवासी सदियों से ही पर्यावरण के प्रति काफी सजग और जागरूक रहे हैं जिसका प्रमाण हमें आज भी झारखंडी संस्कृति में देखने को मिलती है।

झारखंड के लोग अत्यंत प्राचीन काल से हीं पर्यावरण और प्रकृति के साथ जुड़े हुए हैं। इसका प्रमाण यहां की सभ्यता, संस्कृति रहन-सहन,रीति-रिवाज व परंपराओं में आज भी देखने को मिलता है। धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व के साथ-साथ इसका आर्थिक महत्व भी है,लोगों के जीविकोपार्जन का मुख्य साधन भी वनों पर आधारित रहा है। झारखंड के पर्व त्योहार चित्रकला नृत्य संगीत सभी प्रकृति से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। आदिवासियों के विभिन्न गोत्र पशु-पक्षी, पेड़-पौधों के नाम से ही जुड़ा हुआ है। वर्तमान में हमें आज गंभीर पर्यावरणीय संकट का सामना करना पड़ रहा है। निरंतर तापमान की वृद्धि हो रही है। इसके साथ-साथ अन्य पर्यावरणीय कारकों के कारण बहुत गंभीर बीमारियों का सामना भी करना पड़ रहा है। इस दौर में झारखंड की संस्कृति; पर्यावरण संरक्षण का संदेश देती है किन्तु वर्तमान समय में झारखंड में तेजी से वनों का ह्रास हो रहा है खनन के कारण वनों को काफी नुकसान पहुंच रहा है। अवैध वनों की कटाई निरंतर जारी है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 12-13 (2021)

अदरक (जिन्जर) की नई जाति

लाल जी सिंह, चन्दन सिंह पुरोहित, गौतम अनुज एक्का एवं एम. चिन्नाकेशावुलु नायक

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र, पोर्ट ब्लेयर

अदरक (जिन्जीबर) की लगभग 141 जातियां विश्व के विविध भौगोलिक क्षेत्रों उष्णकटिबंधीय एशिया, चीन, जापान एवं ट्रापिकल आस्ट्रेलिया मे पायी जाती है। जिसमे से 20 जातियां भारत में और 07 जातियां अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में पायी जाती है जिनमें हाल ही के वर्षो में खोजी गई नवीन जाति: *जिन्जीबर सूडोस्क्वेरोसम* का अन्वेषण इन्ही द्वीपों से किया गया है जिसका विस्तृत उल्लेख नॉडिक जर्नल ऑफ बोटनी में प्रकाशित हैं। जो इन द्वीपों की अदिवतीय पादप सम्पदा की प्रमाणिकता को इंगित करती है। इन द्वीपों की पादप संपदा न केवल भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए है।

इस नई जाति की खोज विज्ञान जगत के लिए एक नई खोज है जिसका वितरण उत्तर एवं मध्य अंडमान के आर्द्र जंगलों में देखा जा सकता है। यह जाति अब तक ज्ञात अन्य जिन्जीबर जातियों से अद्वितीय एवं भिन्न है। इसमे पाई जाने वाली ट्यूबरस जड़, लाल रंग का सूडोस्टेम, भूमित पुष्प डंटल, सिन्दुरी लाल रंग एवं कमल के आकार वाले स्फुटित फल, लाल रंग के बीज इसकी अपनी पहचान है। इस जाति में अन्य जिन्जीबर जातियों की भॉति औषधीय गुणो की अपार संभावनाओ से भरपूर लक्षण विद्यमान है।

इसका प्रकन्द मजबुत तथा बहुवर्षीय शाक हैं। प्रकन्द भूमिगत तथा उज्ज्वल लाल रंग के साथ कहीं-कहीं पर हल्का पीला रंग भी होता हैं तथा इसमें कई जड़ें होती हैं। जड़ें मांसल व कंद रूपी होती है। जड़ कंद कई व अंडाकार होती है। यह 2.4 - 3 सेमी लंबी व 1.3 - 1.8

जिन्जीबर सूडोस्क्वेरोसम एल.जे. सिंह एवं पी. सिंह: 1. कंद रूपी जड़; 2. फूल

सेमी चौड़ी होती हैं। इसमें सुडो तना 0.5 - 1 सेमी लंबा होता हैं। इसमें पत्ती म्यान चिकनी होती है। इन्टरनोड उपरी तरफ 3 - 5 सेमी लंबा तथा निचली तरफ 5.5 - 8.5 सेमी लंबा होता है। इसमे 9 - 13 पत्तियां होती है। पर्णवृन्त लाल तथा 4 - 5 मिमी लंबा होता है। लिग्युल 5 - 6 मिमी लंबा, कमजोर व अरोमिल होता है। पुष्पक्रम रक्त जैसा लाल रंग का होता है जो मिट्टी में दबे राइजोम से सीधा निकलता है। स्पाइक 2 - 23 तक रक्त लाल रंग के 3.5 - 6 सेमी तक लंबा होता है। पुष्पक्रम वृन्त 6 - 9 सेमी तक भूमिगत होता है। बाहरी पत्रिकाएं रक्त जैसी लाल रंग की अंडाकार होती है व 3 - 5 सेमी लंबी व 2.8 - 3.8 सेमी चौड़ी होती है। पत्रिकाएं अरोमिल, उत्तल आकार की व शीर्ष पर प्रखर होती है। सहपत्रिकाएं रक्त जैसी लाल रंग की व 2.8 - 4.2 सेमी लंबी होती है। पुष्प एकल या कभी-कभी 2 - 3 होते हैं व सभी एक साथ खुलते हैं। पुष्प 6.5 - 7 सेमी लंबा होता है। बाह्य दल 2 - 3.2 सेमी लंबा व इसकी शीर्ष दो भागों में बंटी होती है। दल नलिका 5.6 - 7.5 सेमी लंबी व सफेद रोमिल होती है। दल पाली लाल रंग की भालाकार, 2.3 - 3.2 सेमी लंबी व 8 - 9 सेमी चौड़ी होती है। पार्श्व दल पाली संकरी होती है। लेबलम दल नलिका से छोटा, 4 - 5.5 सेमी लंबा तथा 2 - 2.6 सेमी चौड़ा, फानाकार, अंडाकार होता है। लेबलम के केन्द्र में गहरा बैंगनी लाल रंग तथा पार्श्व पक्षों पर नारंगी लाल रंग के साथ सफेद धब्बे होते हैं। लेबलम का शीर्ष नोकदार तथा किनारे मुड़े हुए होते हैं। पुतंतु लगभग 4 मिमी लंबा होता है। परागकोष लगभग 3 सेमी लंबा पीला-नारंगी होता है तथा संयोजी उपांग लगभग 1.6 सेमी लंबे पीले-सफेद होते है। अंडाशय हल्का भूरा, त्रि-कोष्ठीय, रोमिल तथा अंडाणु एक्जाइल बीजाण्डन्यास में व्यवस्थित होते हैं। वर्तिका लगभग 7.5 सेमी लंबी व वक्री होती है। वर्तिकाग्र हल्की भूरी व वक्री होती है। इसका फल केप्सुल अंडाकार, नारंगी-लाल रंग का 5 - 6.8 सेमी लंबा तथा अनुदैर्ध्य तल से फटता है। इसमें छोटे, अंडाकार, भालाकार, रक्त जैसे लाल रंग के बीज होते है। इस बीज पर चारो तरफ सफेद सुगंधित बीजचोल होता है।

पिछले एक दशक में इस पादप समूह (जिन्जर जाति) का लगभग 20 प्रतिशत आवास नष्ट हो गया है। जिसके कारण इस पादप की संख्या भी इसके प्राकृतिक आवास के साथ साथ कम हो रही है जो संरक्षण की दृष्टि से एक संवेदनशील विषय है। वर्तमान में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र के प्रायोगिक वानस्पतिक उद्यान में एक सक्रिय पादप संरक्षण कार्यक्रम के अन्तगर्त इस जिन्जर जाति को रोपित किया गया है। कायिक विधि द्वारा इसके राइजोम से संवर्धन किया जा रहा हैं । इसमें लगभग 95 प्रतिशत जीवन दर आंकी गई है। उद्यान के जिजींबर ब्लॉक में इसके सफलतापूर्वक संवर्धन एवं संरक्षण को देखा जा सकता है।

जिन्जीबर सूडोस्क्वेरोसम एल.जे. सिंह एवं पी. सिंहः स्फूठित फल

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 14-17 (2021)

मुक्तेश्वर की पादप विविधता और उनके उपयोग की एक झलक

दीक्षा कुसुम उपाध्याय, दीपाक्षी बब्बर, दामिनी शर्मा, प्रियंका, शिवानी मिश्रा एवं संदीप कुमार चौहान

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा

पौधे हमारे लिए प्रकृति का उपहार है। मुक्तेश्वर पादप विविधता का बहुत अच्छा उदाहरण है। इनमें से औषधीय पौधे हमें मूल्यवान चिकित्सा तत्व प्रदान करते हैं। इस रचना में मुक्तेश्वर की पादप विविधता और उनके उपयोग उदाहरण सहित बताए गए हैं। इसमें पौधों और लोगों के बीच संबंध, पौधों की खोज करने, समझने, संरक्षण करने की आवश्यकता के महत्व को बताया गया है।

मुक्तेश्वर भारत के उत्तराखंड के नैनीताल जिले में 7,500 फीट की ऊंचाई पर कुमाऊं की पहाड़ियों में स्थित है। यह समुद्र तल से 29.4722 ° उत्तर और 79.6479 ° पूरब के बीच 2286 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। वहां द एनर्जी एंड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट द्वारा विकसित एक अक्षय पार्क भी है, जो अपनी अधिकांश बिजली की जरूरतों के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग करता है। इसके अलावा सुबह की ताजा हवा की सुगंध और पहाड़ों के बीच चमकती तेज धूप अतुलनीय है। वहां से हमें भारत की दूसरी सबसे ऊंची चोटी नंदादेवी की विशाल राजसी हिमालयन रेंज दिखाई देता है। शहर में कई पर्यटक आकर्षण स्थल हैं जैसे मुक्तेश्वर मंदिर और चौली का जाल । यह क्षेत्र 1893 में स्थापित भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान परिसर के लिए प्रसिद्ध है। मुक्तेश्वर मंदिर जिसे मुक्तेश्वर धाम (भगवान शिव) के नाम से भी जाना जाता है, पहाड़ी इलाके में स्थित है। चौली की जाली मंदिर से 250 मीटर की दूरी पर है। मुक्तेश्वर में एक उपोष्णकटिबंधीय उच्चभूमि जलवायु है। यह फलों के बागों और घने शंकुधारी जंगल से घिरा हुआ है। मौसम का स्वरूप उत्तरी भारत के अन्य भागों की तरह है। इसमें अलग-अलग गर्मी, मानसून और सर्दियों के मौसम हैं। मुक्तेश्वर की पहाड़ी पगडंडियाँ आराम की जगह हैं क्योंकि यह प्रकृति के करीब हैं और हम सभी प्रकृति की सुंदरता को देखकर ताजा और खुश महसूस करते हैं। यहां की पगडंडियों में वनस्पतियों की विशाल विविधता दिखाई देती है। ये पुष्प विविधताएं मुक्तेश्वर के मूल निवासी हो सकती हैं, या वहां की आक्रामक पौधों की प्रजातियां है जैसे लैंटाना कैमारा जो कि विभिन्न स्थानों से लाए जाते है। उत्तराखंड का राजकीय फूल सौसुरिया ओब्लावटा है और राज्य का पेड़ रोडोडेंड्रोन आर्बोरम है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि मनुष्य पौधों पर निर्भर हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पौधे भोजन, वस्त्र, ईंधन, आश्रय और जीवन की कई अन्य आवश्यकताएं प्रदान करते हैं। मुक्तेश्वर में मानव जाति की निर्भरता मूल रूप से क्वेरकस, रोडोडेंड्रोन, चीड़, प्रूनस, प्लम, देवदार, गोभी, फलियां आदि पर है। लोगों द्वारा केवल उनके दिन प्रतिदिन के जीवन में इन पौधों का उपयोग ही नहीं किया जाता है, बल्कि कई जड़ी-बूटियों जैसे रोज़मेरी, पार्सले, थाइम और भी कई पौधे लोगों के द्वारा उगाया जाता है। वे आजीविका बढ़ाने वाली जड़ी-बूटियों पर काम करके उन्हें अच्छी कीमत पर बेचते हैं। यहां

चित्र 1: मुक्तेश्वर से दिखाई देने वाले पहाड़ियों की शांति पहाड़ों की शांति

चित्र 2: चौलाई का पेड़

के लोग अपने उच्च औषधीय मूल्यों के कारण पौधों में से कुछ का उपयोग दवाओं के रूप में भी करते हैं। यही नहीं वे साड़ी, कुर्ता, बेड शीट, मोमबत्तियाँ आदि बनाने के लिए चीड़, केला, क्वेरकस का उपयोग करते हैं क्योंकि इनसे उन्हे कुछ आवश्यक उपयोगी चीजें प्राप्त होती हैं। टीईराई संस्था आम लोगों को उनके द्वारा बनाए गए सामान और पौधों को खरीदकर उनकी आय बढ़ाने में सहायता करता है। प्लम और एप्पल की चटनी वहां बनाई जाती है और इसके लिए उन्हें प्लम स्टॉक की जरूरत होती है जो कि वहां के स्थानीय लोगों द्वारा देखभाल की जाती है। रोडोडेंड्रोन का उपयोग स्क्वैश बनाने के लिए भी किया जाता है।

औषधीय पौधे हमारे लिए प्रकृति का सुंदर और अमूल्य उपहार हैं। वे चिकित्सीय एजेंटों और मूल्यवान कच्चे माल का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं जो इतनी आधुनिक और पारंपरिक दवाएं बनाने में उपयोगी हैं। अपेक्षाकृत कम दुष्प्रभावों के साथ बड़ी संख्या में दवाओं को पौधों से विकसित किया जाता है जो कई बीमारियों के खिलाफ प्रभावी हैं। भारत को दुनिया के मेगा-जैव विविधता केंद्रों में से एक के रूप में क्यों कहा जाता है, इसका एक सबसे बड़ा कारण हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र है जो उनके लिए इतना योगदान दे रहा है। इस क्षेत्र के जंगलों में मुख्य रूप से चीड़-पाइन (*पाइनस रोक्सबर्गी*) और बांज (*कर्वार्कस ग्लूका*) का वर्चस्व है जो *कर्वार्कस ल्यूकोट्रिचोफोरा*, *पाइरस पसिया*, काफल (*माइरीका एस्कुलेंटा*) और बुरान्श (*रोडोडेंड्रोन अरोएन्डेंटा*) जैसी कुछ व्यापक प्रजातियों के साथ शामिल होता है। पाषाणभेद (*बरगिनिया लिगुलता*), शतावरी (*शतावरी जातिमोसस*), किल्मोड (*बर्बरीस एरिस्टाटा*), बिच्छु-बूटी (*अर्टिका डायोका*), तुलसी (*ऑसिफिक टेनुइफ्लोरम*), बरनश (*रोडोडेंड्रॉन अर्बोरम*), देवदारा (*सिड्रस-देवदारा*), यूव (*टैक्सस बेककट*), काफल (*म्यिरिका एस्कुलेंटा*), अनघेदी (*अचिरनेसेस एस्पेरा*), नागपुष्पा (*अराइसेमा एसपी*), चुआ (*अमरानुसस एसपी*), कुछ महत्वपूर्ण औषधीय पौधे हैं जिनके बारे में वे जानते हैं। पाषाणभेद किडनी की पथरी में बहुत उपयोगी है। इस पौधे की जड़ का अर्क मूत्राशय के संक्रमण को ठीक करता है। शतावरी- नाम का अर्थ है कि सौ बीमारियों का इलाज आयुर्वेद में सदियों से महिला प्रजनन प्रणाली का समर्थन करने प्रजनन क्षमता बढ़ाने, समग्र हार्मोन प्रणाली को संतुलित करने और गर्भपात को रोकने के लिए किया जाता रहा है। बिच्छु बूटी के बीज और पत्तियों का उपयोग रक्त शर्करा के स्तर को विनियमित करने के लिए सर्दी और फ्लू जोड़ों के दर्द और उच्च रक्तचाप के इलाज के लिए किया जाता है। यह संयंत्र नाक की सूजन और एलर्जी की प्रतिक्रिया को कम करने में भी बहुत सहायक है विशेष रूप से घास का बुखार ठीक करने में।

तुलसी पवित्र पौधा जो हमारे मन, शरीर और आत्मा को तालमेल प्रदान करता है।यह वास्तव में एक उत्कृष्ट जड़ी बूटी है जो कई स्वास्थ्य और मानसिक-आध्यात्मिक लाभों के लिए जाना जाता है। लेकिन आजकल पारंपरिक ज्ञान का क्षरण हो रहा है और हम पौधों के औषधीय गुणों के बारे मेंअनेक अमूल्य जानकारी खो रहे हैं, जो आज मानव की भलाई के लिए और रोगों से संबंधित समस्याओं को दूर करने के लिए बहुत आवश्यक हैं। मुक्तेश्वर की वनस्पतियों को सांस्कृतिक विविधता में एक मूल्यवान स्थान मिला है। देवदारा (सिड्रस-देवदारा) जिसे देवों का वृक्ष भी कहा जाता है, एक ऐसा दिव्य वृक्ष है जिसमें कई महत्वपूर्ण औषधीय गुण पाए जाते हैं जो प्राचीन संस्कृति से जुड़ा हुआ है और इसे सबसे मूल्यवान वृक्षों में से एक माना जाता है जिनकी पूजा की जाती है। हिंदुओं के बीच यह माना जाता है कि देवदार वन प्राचीन काल में भारतीय ऋषियों और उनके परिवारों का पसंदीदा निवास था जो भगवान शिव

चित्र 3: आजीविका के स्रोत

चित्र 4: पौधों से बने मूल्यवर्धित उत्पाद

को समर्पित थे। देवदार से लकड़ी के टुकड़े का उपयोग हवन करने के लिए किया जाता है जहाँ विभिन्न आहुतियाँ अग्नि में डाल दी जाती हैं जो देवताओं को प्रसन्न करने के लिए की जाती हैं और भगवान की भक्ति का प्रतीक मानी जाती हैं जिससे लोगों में खुशहाली और समृद्धि बनी रहती है।

मुक्तेश्वर के स्थानीय वनस्पतियों का उपयोग आजीविका के लिए होता है। औषधीय मूल्यों और वहां के फूलों के धार्मिक उपयोग के अलावा वहां के लोग इन फूलों का इस्तेमाल अपने आवश्यकता की पूर्ति के लिए भी करते हैं। मुक्तेश्वर समृद्ध वनस्पतियों और जीवों के साथ एक शहर पर्यटन के माध्यम से आर्थिक गतिविधियों की उत्तेजना का अनुभव करने के लिए माना जाता है, जिसके द्वारा स्थानीय लोग मूर्त लाभ प्राप्त कर सकेंगे। टीआरआईएसएचए ने लोगों की जीवित स्थिति को बढ़ाने में एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। टीआरआईएसएचए (टीईआरआई) की रिसर्च इनिशिएटिव ऑन सुपी फॉर हिमालयन एडवांसमेंट) एक सतत उद्यम है जिसका लक्ष्य मुक्तेश्वर में सामुदायिक सहभागिता बढ़ाना है। केंद्र में अनुसंधान और विस्तार ने मुख्य रूप से स्थानीय किसानों की आजीविका में सुधार लाने पर ध्यान केंद्रित किया है। जिससे उन्हें नई कृषि-तकनीकों और फसल फसलों की श्रृंखलाओं को विकसित करने में मदद मिली है। स्थानीय किसानों द्वारा अजवायन, अजवायन के फूल, मीठी तुलसी और दौनी जैसी जड़ी-बूटियों का विपणन किया जाता है। रोजमैरी (रोज़्मैरीनस ओफिसिलानीस) सूखा सहिष्णु पौधा है और इसे गमलों में उगाना आसान है, इसका उपयोग बगीचों में एक सजावटी पौधे के रूप में किया जाता है जहां इसका कीट नियंत्रण प्रभाव चार-चांद लगा देता है। यह अल्जाइमर को रोकता है और कैंसर को भी ठीक करता है।

पानी की कमी, अप्रत्याशित मौसम कीट प्रकोप, मानव-पशु, संघर्ष और घटती पैदावार जैसी विशिष्ट चुनौतियों पर काबू पाकर फलों की खेती बड़े पैमाने पर स्थानीय किसानों द्वारा की जाती है। स्थानीय ग्रामीणों द्वारा रोपित पौधों के महत्व से पता चलता है कि उनका प्रकृति से गहरा संबंध है और उन्हें इस समृद्ध विरासत का हिस्सा होने पर गर्व है। वे लोगहाज़िरी (टैगसेट्स एसपी) का तेल रुपये की कीमत पर बेचा जाता है। बुरांश (रोडोडेंड्रोन आर्बोरम) के फूलों का उपयोग रस या स्क्वैश बनाने के लिए किया जाता है जो ऊर्जा को बढ़ाता है, रक्तचाप को नियंत्रित करता है और दिल की समस्याओं से निपटता है। एक पूरे के रूप में किल्मोरा का पौधा पीले रंग की डाई और टैनिन का अच्छा स्रोत है जिसका उपयोग कपड़ों की रंगाई करने और चमड़े को चमकाने के लिए किया जाता है। पदम (प्रूनस सेरासोइड्स) फल और पत्तियां एक गहरे हरे रंग की डाई देते हैं, शाखाओं का उपयोग छड़ी के रूप में किया जाता है और लकड़ी सुगंधित अगरबत्ती बनाने में उपयोगी है। देवदारा (सिड्रस देवदारा) अपने टिकाऊपन, सड़ांध प्रतिरोधी चरित्र और बारीक, बारीक दाने के कारण निर्माण सामग्री के रूप में काफी मांग में है, जो की लकड़ियों के उच्च पॉलिश लेने में सक्षम होते हैं। धार्मिक मंदिरों के निर्माण और मंदिरों के आसपास के भूनिर्माण में इसका ऐतिहासिक उपयोग अच्छी तरह से दर्ज है। चीड़ के राल जिसे बिरोजा या लिजा कहा जाता है, एक आवश्यक तेल होता है, जिसे आमतौर पर तारपीन के रूप में जाना जाता है जिसका उपयोग सड़कों के निर्माण में किया जाता है और इसका उपयोग बर्तन बनाने के लिए किया जाता है और इसकी मदद से वहां के लोग कुछ पैसे कमा सकते हैं।

चिड़ पाइन व्यापक रूप से हिमालय की मूल तलहटी में लकड़ी के लिए लगाए जाता है। पुराने पेड़ जो आग या सूखे से मर जाते हैं, राल क्रिस्टलीकरण के कारण चमकीले रंग के हो जाते हैं और स्थानीय लोगों द्वारा आग लगाने और यहां तक कि प्रकाश व्यवस्था के लिए उपयोग किए जाते हैं, क्योंकि यह लंबे समय तक जलता है (उच्च राल सामग्री के कारण)। सूखे सुई वन तल पर एक घने कालीन बनाते

हैं, जिसे स्थानीय लोग अपने मवेशियों के लिए बिस्तर के रूप में काम करने के लिए बड़े बंडलों में इकट्ठा करते हैं। चीड़ राल मुख्य रूप से कागज, साबुन, सौंदर्य प्रसाधन, पेंट, वार्निश, रबर और पॉलिश उद्योगों में उपयोग किया जाता है। मुक्तेश्वर की स्थानीय वनस्पतियों को इसकी विशिष्ट सुगंध और मच्छर से बचाने वाली प्रकृति के कारण अत्यधिक महत्व दिया जाता है। चिर पाइन और केल की लकड़ी का उपयोग अक्सर छतों, खिड़कियों, दरवाजों और घर के फर्श पर किया जाता है। वे भोजन तैयार करने और कृषि उपकरण बनाने के लिए बंज (क्वेरकस ल्यूकोट्रिकोफोरा) और खारसु (क्वेरकस सेमीकार्पिफोलिया) की लकड़ी का उपयोग जलाऊ लकड़ी के रूप में करते हैं। बंज भी विभिन्न त्योहारों को मनाते हुए महिलाओं के लिए मेहंदी का रंग प्रदान करता है। जेल की सुइयों को घरों के बाहर जलाया जाता है और प्रभावी मच्छर विकर्षकके रूप में कार्य करते है। पालतू भेड़ और मवेशियों के लिए लोकप्रिय चारा बंज, खर्सू, मालसा, मिर्ची घांस और बहेड़ा से आता है। बिच्छु घास (अर्टिका डाइओइका) को सुखाया जाता है, पानी में उबाला जाता है और स्थानीय लोगों द्वारा पकवान के रूप में उपयोग किया जाता है जो ठंडी सर्दियों में रक्त परिसंचरण को बढ़ाने में मदद करता है। मडुआ (एल्युसिन कोरकाना) रोटी, एलो के गुटके और भांग की चटनी कुछ विशेष कुमाउनी व्यंजन हैं। मडुआ (एलीसिन कोरैकाना) कैल्शियम से भरपूर होता है और इसे केक, पुडिंग, बिस्कुट, चपातियों या दलिया में पकाया जा सकता है। मुक्तेश्वर के हर घर में जंगली तुलसी (औसीमम) की पूजा की जा सकती है। गाजे और ठाकुल (स्थानीय नाम) जैसे घास सूख जाते हैं, प्रत्येक स्थानीय घर में छोटे हाथ झाड़ू बनाने के लिए एक साथ बांधा जाता है और कुछ को स्थानीय बाजार में भी बेचा जाता है। लोग भोजन, वस्त्र, आश्रय और स्वास्थ्य देखभाल जैसी बुनियादी मानवीय जरूरतों को पूरा करने के लिए पौधों पर निर्भर हैं। लेटी बुंगा गाँव के अधिकांश लोगआजीविका कमाने के लिए कुछ कृषि फसलों पर निर्भर हैं। वे लोगआलू, फूलगोभी, मटर, राजमा, नाशपाती, कफ़ल, सेब और बेर की खेती करते हैं ताकि उनके परिवार की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके और बचे हुए हिस्से को हल्द्वानी, जो कि मुक्तेश्वर में 72 किलोमीटर है, में बेचा जा सके। इससे हमें यह पता लगता है कि पौधे न केवल आजीविका सहायता के साधन हैं बल्कि मुक्तेश्वर में लोगों की दिन-प्रतिदिन की जरूरतों को भी पूरा करते हैं।

इसलिए पौधों और लोगों के बीच संबंध, उनके एक दूसरे पर प्रभाव को महसूस किया जाने के बाद यह जरूरी है कि ऐसे और भी पौधों की खोज करने, समझने, संरक्षण प्रदान करने की आवश्यकता है जो मानव अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण हैं।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 18-19 (2021)

अंडमान एवं निकोबार द्वीपसमूह में करौंदा की नई स्थानिक जाति

लाल जी सिंह, चन्दन सिंह पुरोहित, गौतम अनुज एक्का एवं फौज़िया सलीम

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र, पोर्ट ब्लेयर

करौंदा एक आर्थिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर एपोसाइनेसी कुल का पादप हैं, जिसे वानस्पतिक जगत में कैरिसा वंश के अन्तर्गत रखा गया है। कैरिसा का सबसे पहले विस्तृत उल्लेख लिनियस ने वर्ष 1771 में अपनी पुस्तक 'मानटिसा प्लांटेरम' में किया था।

भारतीय उपमहाद्वीप सहित अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया व एशिया के उपोष्ण एवं उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में इसकी कांटेदार झाड़ियां या छोटे पेड़ रूपी 20-30 जातियां पाई जाती हैं। भारत में कैरिसा की 11 जातियां पाई जाती है इनमें अंडमान द्वीपों में खोजी गई नवीन जाति कैरिसा अंडमानेनसिस भी शामिल है जिसका विस्तृत आलेख इंडियन जर्नल ऑफ फोरेस्ट्री 35(4):493.2012 में प्रकाशित किया गया है और इस जाति का नामकरण इसके प्राकृतिक भौगोलिक आवास स्थान अंडमान द्वीप समूह पर आधारित है। इस जाति का सामान्य वितरण दक्षिण अंडमान से अलिखित है व इसका हरबेरियम प्रादर्श भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र के हरबेरियम में संग्रहित है।

यह एक बड़ी झाड़ीदार लता है, यह पादप हमेशा हरा रहता हैं और इस पर कंाटे पाए जाते हैं, जो सरल, 7 सेमी लंबे व पत्ती की अक्ष पर क्रुसीफॉर्म होते हैं। पत्तियां विपरीत, 3 - 11.5 सेमी लंबी, 1.8 - 6 सेमी चौड़ी, अंडाकार, आधार पर कुंठित, शीर्ष पर प्रखर होती हैं। पत्तियां झिल्लीदार, उपरी सतह पर हरी व चमकदार तथा निचली सतह पर पीली-हरी होती हैं। पत्तियों में 3 - 5 जोड़ी पार्श्व शिराऐं जो उपरी तरफ अस्पष्ट तथा नीचे की तरफ स्पष्ट दिखाई देती हैं। पर्ण वृन्त लाल रंग का व 0.5 - 0.8 सेमी लंबा होता हैं। पुष्पक्रमवृन्त 1 - 2 सेमी लंबा व

कैरिसा अंडमानेनसिस एल. जे. सिंह एवं मुरूगनः 1. पुष्प , 2. क्रुसीफॉर्म कांटा 3. फल

बेलनाकार होता हैं। फूल 6 - 23 तक संख्या में गुच्छों में पाया जाता हैं। फूल द्विलिंगी, त्रिज्या सममित, लगभग 1.5 सेमी व्यास में फैला सफेद रंग का व मिठी सुगंधित खुशबु आती है। बाह्य दल पाली 5, भालाकार, आधार से जुड़ी लगभग 2.5 मिमी लंबी एवं 1.5 मिमी चौड़ी होती हैं। इसके किनारे पूर्ण, शीर्ष नुकीला व बाहरी तरफ रोमिल होता है। दल नलिका 2 - 3 सेमी लंबी तथा शीर्ष की तरफ चौड़ी होती है। दलपाली 5, भालाकार, 0.7 - 1.6 सेमी लंबी व शीर्ष पर प्रखर होती हैं। पुंकेसर 5, दलनलिका के मध्य में उपर की तरफ जुड़े होते हैं। पुतंतु 1 - 3 मिमी लंबा होता है। परागकोष रेखीय, 2.5 मिमी लंबा व 0.6 मिमी चौड़ा, आधार पर गोल तथा द्विकोशीकीय होता है। अण्डाशय दीर्घवृत्ताभ व दो कोशीकीय होता है। प्रत्येक में एक अण्डाणु होता है जो लगभग 1.7 मिमी लंबा तथा 1.2 मिमी चौड़ा होता है व एक्जाइल बीजाण्डन्यास में व्यवस्थित होते हैं। वृतिका पतली, 6 - 8 मिमी लंबी होती है। वर्तिकाग्र खड़ी व दो भागों में बंटी होती है व लगभग 1.7 मिमी लंबी होती हैं। फल दीर्घ वृत्ताभ, 1 - 2.2 सेमी लंबा तथा 0.6 - 1.2 सेमी चौड़ा होता है। कच्चा फल हरा रंग का तथा पकने पर लाल से भूरा-लाल रंग को हो जाता है। फल का डंठल 0.6 - 1.5 सेमी लंबा होता है। इसमें दो बीज होते है जो अवतलाकार होता है। बीज की सतह पर छोटे- छोटे रोऐं पाए जाते है।

विश्व के अनेक भागों की भांति भारत में भी करौंदें का उपयोग विविघ रूपों में किया जाता है। करौंदा में विटामिन-सी प्रचुर मात्रा में होने के साथ-साथ एंटी-ऑक्सीडेंट भी पाया जाता हैं। आमतौर पर करौंदें का उपयोग सब्जी, चटनी, मुरब्बे और आचार के लिए किया जाता है।

इन द्वीपों में करौंदा की यह एक मात्र स्थानिक जाति हैं जिसका वितरण सीमित जंगलीय क्षेत्र्ाों में देखा जा सकता है। प्राकृतिक आपदाएं जैसे चक्र्रवात, सुनामी आदि से व मानव जनित कारणों से इसकी प्राकृतिक संख्या पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता हैं। इसकी सीमित संख्या व भौगोलिक वितरण को देखते हुए इसके संरक्षण हेतु एक सक्रिय प्रयास की आवश्यकता हैं। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र के प्रायोगिक उद्यान में एक्स सिटू पादप संरक्षण के अन्तगर्त इसके संवर्धन का कार्य चल रहा है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 20-24 (2021)

भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान के पादप प्लवक, वृहत शैवाल और जलमग्न मैक्रोफाइटस

शिव कुमार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा

भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान की स्थापना जून 1992 में रियो डी जेनिरो में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में जैव-विविधता संधि [जिसे कन्वेंशन ऑन बायोलॉजिकल डायवर्सिटी (सीबीडी) के नाम से जाना जाता है] पर हस्ताक्षर किए जाने के उपरांत नोएडा में यमुना के रेतीले एवं उभरे 200 एकड़ भूभाग पर हुआ। उक्त भूभाग का स्थातंरण नोएडा प्राधिकरण द्वारा भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के नामित वैज्ञानिक/अधिकारी को पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, नई दिल्ली में 19 मार्च, 1997 के दिन किया गया था। जैव-विविधता संधि वैश्विक स्तर पर दिसम्बर 1993 में प्रभावी हुई थी। पृथ्वी सम्मेलन में इस बात पर सहमति बनी कि जीव तथा पादप संसाधनों पर उक्त देशों का स्वामित्व होना चाहिये जहां वे विकसित होगें। साथ ही जैव-विविधता संधि के अनुच्छेद 9 के अनुसार उक्त देशों को, उनके देश-प्रदेश में पाए जाने वाले स्थानिक (एनडेमिक) एवं संकटग्रस्त पौधों को बाह्यस्थान या गैर-स्थानिक संरक्षण (एक्स-सिटू कॉर्जवेशन) विधि द्वारा संरक्षित किए जाने का प्रावधान करना होगा। इस क्रम में उद्यान के स्थापना के ऊपरांत, 23 राज्यों के विभिन्न परिवेशों के साथ-साथ स्थानिक एवं संकटग्रस्त पौधों को लाकर संरक्षित किया जा चुका है। जिसमें धरातलीय या स्थलीय (टेरेस्ट्रियल) पौधों की संख्या अत्यधिक है।

1. विशेष वैज्ञानिक जाल द्वारा जलाशय के पादप प्लवक को संग्रहित करते हुए, 2. जाल से पादप प्लवक को नमुने की शीशी में डालते हुए तथा 3. नमुने की शीशी में संग्रहित पादप एवं जन्तु प्लवक।

अगर हम जलीय पौधों की बात करें, तो उद्यान में अवस्थित 3 मानव निर्मित जलाशयों में, सबसे बड़ा जलाशय 75 फुट लम्बा, 48 फुट चौड़ा तथा 3 फुट गहरा का निर्माण कार्य सितम्बर, 2015 में पूरा हुआ। इसमें भूमिगत क्षारीय पानी भरे जाने के कारण, प्राकृतिक ऊपचार जिसमें गोबर तथा कार्बनिक उर्वक का प्रयोग कर जलीय जीव-जन्तुओं उद्भवित किया गया। प्रारम्भिक अध्ययन के समय, इस जलाशय में 11 तरह के पादप प्लवक, 1 बड़ा शैवाल तथा 5 जलमग्न मैक्रोफाइटस प्राकृतिक तरिके से उत्पन्न पाए गए। सभी पादपों के प्रकार एवं गुण कुछ निम्न प्रकार के हैं :

1. पादप प्लवक (फाइटोप्लैंट्न) :

i) *क्लेमाईडोमोनस रैनहार्डी*

क्लेमाईडोमोनस रैनहार्डी क्लेमाईडोमोनेसी कुल का एक कोशीय, 10 माइक्रोमीटर व्यास का हरा शैवाल है जिसमें एक कप के आकार का हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट), पाइरीनॉइड तथा दृक् बिंदु (आईस्पाट) के साथ अपने दो कशाभ के माध्यम से जल में हमेशा तैरते रहता है। यह प्रजाति विश्व में मिट्टी एवं मीठे जल में पाया जाता है। इसका उपयोग विकासीय जीव विज्ञान के अध्ययन के साथ-साथ जैविक औषधि तथा ईंधन के उद्पादन के लिए अनुसंधान जारी है।

ii) *क्लोरेला वल्गारिस*

क्लोरेला वल्गरिस, क्लोरेलेसी कुल का एक कोशीय, गोलाकार, हरा शैवाल है जिसकी उत्पत्ति प्रीकैम्ब्रियन युग में हुआ। इस पादप प्लवक का उपयोग जापान में मुख्य तौर पर प्रोटिन युक्त आहार या आहार पूरक की तरह किया जाता है। इसके अलावे वैश्विक स्तर पर अंतरिक्ष यात्रीयों के साथ-साथ आम लोगों के द्वारा इसका उपयोग पोषण और चिकित्सीय कार्य के लिए किया जाता है। साथ ही इससे जैविक ईंधन बनाए जाने के ऊपर कार्य चल रहा है।

iii) *क्लॉस्ट्रियम एह्रेनबर्गि*

क्लॉस्ट्रियम एह्रेनबर्गि क्लॉस्टेरेसी कुल का एक कोशीय, लम्बा एवं अंदर के तरफ मुड़ा हुआ, एक नाभिक, दो हरितलवक (प्लास्टक्लोरो) तथा असंख्य पाइरीनॉइड वाला हरा शैवाल है। यह मीठे जल में हमेशा तैरते रहता है। जीव विज्ञान एवं पारिस्थिकी तंत्र के अध्ययन के लिए प्रयोग किया जाता है।

iv) *यूडोरिना एलिगेंस*

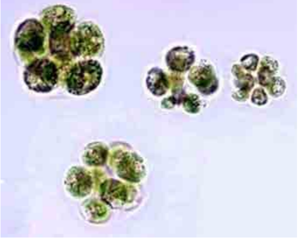

यूडोरिना एलिगेंस वोल्वोकेसी कुल का एक ऐसा वंश है जिसमें 16, 32 या 64 कोशिकाएँ एक साथ समुह में कालोनी बनाकर रहते हैं। हर कालोनी गोल तथा कशाभिकाओं की सहायता से जल में हमेशा तैरते रहता है। कालोनी के प्रत्येक कोशिका में नाभिक, हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट), पाइरीनॉइड तथा दृक् बिंदु (आईस्पाट) से निकलने वाले दो कशाभ होते हैं।

v) *फ्रेजिलेरिया जाति*

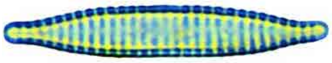

फ्रेजिलेरिया, फ्रेजिलेरिएसी कुल का एक वंश, जिनकी 500 से अधिक जातियॉ हैं तथा मीठे एवं खारा दोनों प्रकार के जल में पाया जाता है। यह आकार में लम्बा तथा पेट्री डिश की तरह होते हैं। कोशिका के अन्दर एक अथवा अनेक, विविध आकार के भूरे-पीले से वर्णकीलवक (क्रोमैटोफोर) होते हैं तथा इनका दीवार सिलिकायुक्त होता है। प्राय: जल में ये पल्वक और तलहट्टी में कालोनी तथा अन्य पौधे पर अधिपादपीय के रुप में विकसित होते हैं। जल में इनकी अत्यधिकता सुपोषण (यूट्रॉफिकेशन) कहलाता है जिसके कारण जल में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है।

vi) *नेविकुला क्रप्टोसीफाला*

नेविकुला क्रप्टोसीफाला नेविकुलेसी कुल का 1,200 जातियों में से एक है। यह एक कोशिका का बना होता है और आकार में यह एक नाव के जैसे दिखता है। यह मीठे एवं खारा दोनों प्रकार के जल में उत्पन्न होता है। फ्रेजिलेरिया जाति की तरह, इसके कोशिका के अन्दर एक अथवा अनेक, विविध आकार के भूरे-पीले वर्णकीलवक (क्रोमैटोफोर) होते हैं तथा इनका दीवार सिलिकायुक्त होता है। प्राय: जल में ये पल्वक और तलहट्टी में कालोनी तथा विभिन्न प्रकार के वस्तुओं पर अधिपादपीय के रुप में विकसित होते हैं। प्रकाश संश्लेषण के द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र में यह अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन प्रदान करता है। इसके अलावे जलीय परिवेश में खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

vii) *पीडियास्ट्रम सिम्प्लेक्स*

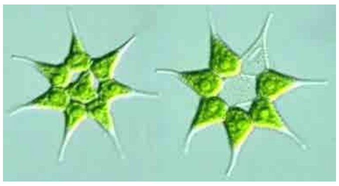

पीडियास्ट्रम सिम्प्लेक्स मेयेन, हाइड्रोडिक्टिएसी कुल का एक जाति है। यह मीठे जल में उत्पन्न होने वाला एक से अधिक निश्चित कोशिकाओं की संख्या द्वारा कालोनी बनाने वाला हरा शैवाल है। कालोनी का आकार गोल, जो सामान्यत: 5 कोनों वाले विभिन्न कोशिकाओं के मिलने से बनता है। कोशिका के अंदर नाभिक, प्लेट या जालीदार हरितलवक (प्लास्टक्लोरो) तथा पाइरीनॉइड के साथ 5 में से एक कोना सींग की तरह बाहर निकला हुआ होता है तथा कोशिका की दीवार दानेदार, झुरीदार या दाँतेदार होता है। नेविकुला क्रप्टोसीफाला कुट्ज़ की तरह यह भी पारिस्थितिकी तंत्र में अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन प्रदान करने के साथ दूषित पानी को प्राकृतिक रुप में शुद्ध करता है साथ ही जलीय परिवेश में यह प्रजाति खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

viii) *फेकस लौंगीकौउडा*

फेकस लौंगीकौउडा यूग्लेनेसी कुल का एक प्रजाति जो प्राय: मीठे जल में पाया जाता है। यह आवश्यकता से अधिक चपटा, आकार निश्चित एवं पतली झिल्ली से ढका होता है। इसका हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट) छोटा एवं थाली के आकार का, पाइरीनॉइड प्राय: नगण्य, शरीर की लम्बाई 120 से 170 माइक्रोन, चौड़ाई 45 से 70 माइक्रोन, घुमावदार, कशाभ शारीरिक लम्बाई के आधा होता है। यह जाति भी पारिस्थितिकी तंत्र में ऑक्सीजन प्रदान करने के साथ दूषित जल को शुद्ध करने के साथ जलीय परिवेश में खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

ix) *सेनेडेस्मस क़ुआड्रिकौउडा*

सेनेडेस्मस क़ुआड्रिकौउडा सेनेडेस्मेसी कुल का सहजता से मीठे तथा प्रदूषित जल में उत्पन्न वाला हरा शैवाल है। इसका किसी प्रकार के पानी में मिलना, उसके गुणवत्ता के स्तर को बतलाता है। यह प्राय: 4 या 2, 8, 16 कोशिकाओं का कालोनी बनाता है। कालोनी के सभी कोशिका अंडाकार या अर्धचन्द्राकार आकार होने के साथ एक-दूसरे से अपने बगल, एक ही कतार या टेढ़े-मेढ़े ढ़ग से जुड़े होते हैं। कालोनी के किनारे वाला कोशिका का प्रत्येक सिरा काँटे की तरह निकला हो सकता है। कोशिका की दीवार प्राय: चिकना, परन्तु, कभी-कभी दानेदार या मेंडदार हो सकता है। यह प्रजाति भी पारिस्थितिकी तंत्र में ऑक्सीजन प्रदान करने के साथ-साथ दूषित जल को शुद्ध करने के अलावे जलीय परिवेश में खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

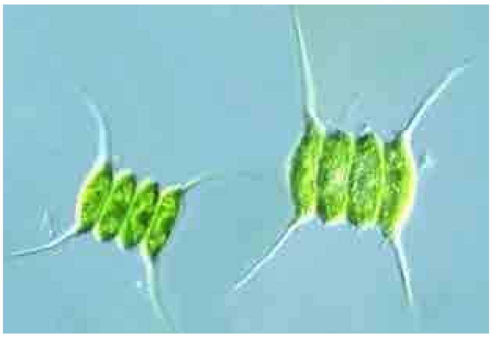

x) *स्पाइरोगाइरा* प्रजाति

स्पाइरोगाइरा को स्थानिय बोल-चाल की भाषा में 'पानी का सिल्क' या 'कंबल खरपतवार' कहा जाता है। यह जाइग्नेमेटेसी कुल का एक वंश है जिसकी 500 से अधिक जातियाँ हैं। यह हरे शैवाल के अंतर्गत, अनेक कोशिकाओं के जुड़ने पर बारिक धागे के जैसा (फिलामेंट या तन्तु) आकार वाला काई या शैवाल है। यह प्राय: मीठे जल में पाया जाता है। इसके प्रत्येक कोशिका में एक नाभिक, 1 या 2 से ज्यादा हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट) जो कुंडलिनी या सर्पिले आकार के साथ अनेक पाइरीनॉइड युक्त होता है। कोशिका की चौड़ाई 10 से 100 माइक्रोन तथा फिलामेंट की लम्बाई कई सें.मी. तक हो सकता है। यह साफ-सुथरे या दूषित पानी के अन्दर बहुत तेजी से उत्पन्न होकर पूरे जलाशय के तल या सुर्य के रोशनी के अनुसार पानी के ऊपर हमेशा तैरता रहता है। यह पानी के अंदर अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन पैदा करता है तथा खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

xi) *ज़िगनेमा* जाति

ज़िगनेमा, जाइग्नेमेटेसी कुल का एक वंश है जिसके 100 से अधिक जातियाँ हैं। स्पाइरोगाइरा की तरह यह भी मीठे जल में पाया जाता है एवं बारिक धागे के जैसा (फिलामेंट या तन्तु) आकार वाला काई या शैवाल है। परन्तु, स्थापनांग (होल्डफास्ट) की मदद से यह जलाशय के आधार से जुड़ा रहता है। यह पीले-हरे से चमकीले हरे रंग का अनेक तन्तुओं जो पीपे के आकार वाले कोशिकाओं से बनता है, तलहट या जल के अन्दर चटाई की तरह अच्छादित रहता है। इसके प्रत्येक कोशिका में 2 तारों के आकृति का हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट) होता है। पानी के अंदर, यह अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन पैदा करता है तथा यह भी खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है।

2. वृहत शैवाल:

कारा जाति

कारा को स्थानिय बोल-चाल की भाषा में सम्भवत: इससे सड़े हुए या लहसुन की तरह निकलने वाले दूर्गध के कारण 'मस्कघास' कहा जाता है। यह एक अपुष्पीय पादप है जो धरातल से अपने को जोड़े रखता है। इसकी आकारिकी लगभग हाइड्रिला प्रजाति की तरह होता है। इसका शारीरिक संरचना बहु-कोशिकाएँ एवं अनेक शाखाओं के साथ गांठ या गिरह धारण किए होता है। लगभग हर एक गांठ या गिरह से 6 से 16 बेलनाकार उप-शाखाएँ निकलती हैं। पूर्ण विकसित होने पर भी यह जल के उपरी सतह से बाहर नहीं निकलता है। कोशिका का बाहरी दीवार दानेदार या खुरखुरा होता है। मस्कघास जलीय जन्तुओं जैसे मछली, उभयचर (एम्फिबियन्स), सरीसृप, बतख की प्रजातिओं के लिए सुस्वादु खाद्य के साथ-साथ सुरक्षित वास-स्थान प्रदान करता है। इसके जीवन-लीला समाप्त होने पर जल के अंन्दर, घटक जीवाणु तथा जलीय कवक (फंगस) छोटे-छोटे अकशेरूकीयों (इनभर्टेब्रैट्स) के लिए खाना तैयार करते हैं।

3. जलमग्न मैक्रोफाइटस:

i) *सेराटोफिलम डिमर्सम*

सेराटोफिलम डिमर्सम को सामान्यत: बोल-चाल की भाषा में 'हार्नवर्ट' या 'कून की पूंछ' कहा जाता है। यह आवृतबीजी पौधे (एंजियोस्पर्म्स) के अंतर्गत सेराटोफाइलेसी कुल का बहुवर्षी पौधा है। यह जलमग्न अवस्था में रहते हुए उनमुक्त रुप से तैरने वाला जलीय पौधा है। इस पौधे की लम्बाई 1 से 3 मीटर होता है। इसकी पत्तियाँ साधारण, 2 या 8 नोकवाला, धागेनुमा, खंडित किनारे या काँटेदार दाँत के जैसा, 6 से 12 की संख्या में गाँढ के उपर चारो तरफ अवस्थित होता है। इसकी कोशिकाओं में एक नाभिक और एक प्लेट जैसा भूरा क्लोरोप्लास्ट होता है। एक्वैरियम संयंत्र के लिए यह एक लोकप्रिय पौधा है। इससे निकलने वाले रसायन का पादप प्लवकों पर ऐलेलोपैथिक प्रभाव पड़ने से उनकी वृद्धि को नियंत्रित करता है। परन्तु, जल के अन्दर इसके अपने अत्यधिक मात्रा में वृद्धि के कारण अन्य जलीय जैव विविधता पर बुरा प्रभाव भी पड़ता है।

ii) *हाइड्रिला वर्टिसिलाटा*

आवृतबीजी पौधे (एंजियोस्पर्म्स) के अंतर्गत *हाइड्रिला वर्टिसिलाटा* हाइड्रोचेरिटेसी कुल का एक बहुवर्षी पौधा है। यह जल की

गहराई में 2 मीटर तक उगता है तथा इसका तना 1 से 2 मीटर लंबा हो सकता है। इसका पौधा कोमल व कुछ हरे-पीले रंग का होता है। इस पौधे में जड़ें नहीं होती हैं तथा पतले तनें पर नम्र, छोटी व पतली पत्तियाँ गाँठ के ऊपर चारो तरफ लगी रहती हैं। इसकी पत्तियाँ 5 से 20 मिलीमीटर लंबी एवं 0.7 से 2 मिलीमीटर तक चौड़ी, किनारा दाँतेदार या छोटे काँटेनुमा होती हैं। अत्यधिक खारे जल में भी यह सहजता से बढ़ते रहता है। पानी के अंदर यह अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन प्रदान करता है तथा खाद्य-श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रयोगशालाओं में इसका उपयोग वैज्ञानिक अध्ययन/अनुसंधान के लिए किया जाता है।

iii) *पोटामोजेटॉन क्रिस्पस*

पोटामोजेटॉन क्रिस्पस को बोल-चाल की भाषा में 'लट या लट-पत्ती सेवार' (कर्ड्ल या कर्ली-लिफ पोंड्वीड) कहते हैं। यह

पोटामोजेटोनेसी कुल का एक बहुवर्षी जलीय पौधा है जो बिल्कुल सीधा, शाखित तना के साथ एक मीटर तक लम्बा हो सकता है। पत्तियाँ बिना डंठल के रैखिक या आयताकार आकार का होता है। पत्तियों का रंग चमकीला हरा, ओलिव हरा या भूरा और किनारा दाँतेदार या लहरदार होता है। यह स्थिर या अल्प गतिशील/प्रवाह वाले कैल्शियम युक्त जल स्रोतों में बहुधा पाया जाता है। प्रदूषक प्रतिरोधक होने कारण, यह अत्यधिक प्रदूषित जल स्रोतों में सहजता से उत्पन्न होता है। उद्यान के तलाब को सजाने के लिए इसे उगाया जाता है।

iv) *पोटामोजेटॉन नोडोसस*

पोटामोजेटॉन नोडोसस को ‘लम्बा पत्ता सेवार’ (लौंग लिफ पोंड्वीड) भी कहा जाता है और हर प्रकार के जल-स्त्रोतों जैसे तालाब, झील, गड्ढ़े या जल-धाराओं में उगता है। यह पोटामोजेटोनेसी कुल का एक बहुवर्षी जलीय पौधा है जिसकी पत्तियाँ पतली, लम्बी तथा शाखित तना, साधारणत: 1 मीटर से अधिक लम्बा होता है। पत्तियाँ रैखिक से लेकर चौड़े भाले के आकार की होती है और लम्बे डंठल की सहायता से हमेशा तैरते रहता है। पुष्पगुच्छ के स्पाइक (खूंटे) में बहुत सारे छोटे-छोटे फूल पुष्प-वृंत के माध्यम से जल सतह के ऊपर निकला रहता है। यह जलीय पौधा, छोटे और बड़े जन्तुओं जैसे कीट-पतंगे, उभयचर, मछलियाँ, पक्षियों, कछुए, इत्यादि के लिए आश्रय, प्रजनन स्थल के साथ खाद्य का प्रमुख स्त्रोत है।

v) *वालिसनेरिया स्पाइरालिस*

वालिसनेरिया स्पाइरालिस हाइड्रोचेरिटेसी कुल का एक बहुवर्षी पौधा है जिसे आम बोल-चाल की भाषा में ‘स्याल या सीधा वालिसनेरिया, फीता या ईल घास’ भी कहा जाता है। इस पौधे को सही ढ़ग से विकसित होने के लिए अच्छी रोशनी के साथ-साथ भरपूर पोषण वाले आधार की जरुरत पड़ती है तथा एक्वैरियम संयंत्र के लिए एक लोकप्रिय पौधा है। परन्तु, इसकी पत्तियाँ संकीर्ण, लम्बाई में, गंदला-हरा से लालिमा लिए हुए, 3.00 फुट लम्बा एवं 0.75 इंच चौड़ा तक हो सकता है। प्राकृति जलाशयों में यह तेजी से बढ़ता है जिसके कारण इनका जैव मात्रा या जैव संहति या 'बायोमास' बहुत ज्यादा होता है तथा अन्य जलीय पादप या जन्तुओं (जैव विविधता) के जीवन या वृद्धि पर बुरा प्रभाव पड़ता है। शायद इसी कारण न्यूज़ीलैंड समझौता के अनुसार राष्ट्रीय कीट संयंत्र समझौता नेशनल पेस्ट प्लांट एकोर्ड (एनपीपीए) ने इस पौधे को व्यावसायिक स्तर पर उगाने या खेती करने या बेचने पर प्रतिबंध लगा रखा है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 25 (2021)

डेस्मोस्टेचिया बाईपिन्नाटा (एल.) स्टैफ – बिहार राज्य में छप्पर बनाने के लिए उपयोगी घास

ए. सी. हलदर, आर. सरवनन, पी. ऐ. ढोले एवं के अल्ताफ अहमद कबीर

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, हावड़ा

" घास " पौधों का एक प्राकृतिक सजातीय समूह है जो कि पोएसी कुल के अंतर्गत आता है। पोएसी पौधों का सबसे आकर्षक परिवार है, जिसमें विविधता की एक विस्तृत श्रृंखला होती है। यह मनुष्य और जानवरों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक खाद्य प्रदाता के रूप में इस कुल की सर्वोपरि भूमिका है। दुनिया के 80% से अधिक कैलोरी के लिए, चावल, गन्ना, गेहूं और मकई का उपयोग किया जाता है। कई घास समृद्ध चारे का लिए, मिट्टी के कटाव रोकने के लिये, अच्छा मैदान बनाने और लॉन बनाने के लिए जानी जाती हैं, इसी तरह कुछ घास का उपयोग अच्छी छप्पर बनाने के लिए भी किया जाता है।

मनुष्य अपने भोजन, कपड़े, आश्रय के साथ-साथ बीमारियों के इलाज के लिए, उपयोगी दवाइयो के लिए घास पर निर्भर है। लेकिन अभी भी घास के उपयोग का एक बड़ा हिस्सा अनभिलिखित है, और हमारे देश के आदिवासी मुख्य रूप से अपनी रोजी-रोटी की जरूरतों के लिए पौधों पर निर्भर करते हैं। वे पौधों के उपयोग के ज्ञान का एक भंडार गृह बन जाते हैं। वे आम तौर पर मिट्टी की दीवारों से बनी घास फूस की झोपड़ियों में रहते हैं। आश्रय, छप्पर, चारे के रूप में, विभिन्न वस्तुएं बनाने के लिए अप्लुडा, अरुंडो, सिमबोपोगोन, इम्पेरेटा, ओरेजा, फ्राग्माइट्स, सैकरम, थेमेडा , सेहिमा इत्यादी की प्रजातियो का उपयोग सबसे ज्यादा किया जाता है।

बिहार राज्य के पूर्णिया और कटिहार जिलों में लोकवानस्पतिकी संबंधी अध्ययन के दौरान, विभिन्न आदिवासी आबादी वाले ग्रामीण क्षेत्रों से बैद्य या अनुभवी बुजूर्ग लोगों की मदद से कुल 141 पेड़-पौधों की प्रजातियों को एकत्रित किया गया। लगभग 181 लोकवानस्पतिक उपयोग अभिलिखित किए गए थे। 181 में से 96 का उपयोग औषधीय, 32 भोजन, 11 पशु चिकित्सा, 3 चारा, 8 दातून, 2 चटाई बनाने, 2 रस्सी बनाने,1 प्लेट बनाने, 1 गोंद, 3 छप्पर बनाने, 3 कीट से बचाने वाली क्रीम,1 साँप विकर्षक, 2 ईंधन,3 तेल उपज,1 स्क्रबर, और 11 अन्य उद्देश्य के रूप में किया गया था।

वर्तमान अध्ययन में, छप्पर बनाने के लिए घास के उपयोग को अभिलिखित करने का प्रयास किया गया है। *डेस्मोस्टेचिया बायपिन्नाटा*, घास की एक प्रजाति जो कटिहार और आस-पास के क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में उगाई जाती है, यह मूल रूप से छप्पर बनाने के प्रयोजनों के लिए छत सामग्री के रूप में उपयोग की जाती है। गाँव की महिलाएँ नवंबर से दिसंबर के दौरान अच्छी तरह से विकसित पौधों को (पुष्पक्रम उभरने से पहले) काट कर, उन्हें धूप में सूखने के लिए छोड़ देती है। 2 या 3 सप्ताह के बाद, इन्हें छोटे छोटे बण्डलों में बांध कर छप्पर बनाने के लिए तैयार किया जाता है। छप्पर वाली झोपड़ी मूल रूप से बांस की आंतरिक संरचना के साथ बनाई जाती है, इसके बाद घास के छोटे छोटे बंडलो को ब्यूटिया मोनोस्पर्मा की छाल या नायलॉन की रस्सी की मदद से बांधा जाता है। ये झोपड़ियां शीत प्रभाव देती है और दीर्घायु होती हैं।

संथाल आदिवासी बस्ती में, अन्य घास की तरह, सैकरम समूह के घास को छोटे टुकड़ों में काटा जाता है और सूरज की धूप में सूखने के बाद कीचड़ के साथ मिलाया जाता है। यह मिश्रण मवेशी आश्रय के लिए बनी दिवारो को अधिक मजबूती देता है। इस प्रकार के घर ऊष्मीय विसंवाहक की तरह काम करते है, इसलिए गर्मियों में, थोड़ा ठंडा और सर्दियों में थोड़ा गरम रहते है।

गो ग्रीन मूवमेंट के साथ हम इस प्राचीन संस्कृति के मूल्य की सराहना करते हैं।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 26-28 (2021)

औषधीय पौधे – एक ऐतिहासिक अवलोकन

भैरव यादव

विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

मानव सभ्यता जितनी प्राचीन है, उतनी ही प्राचीन काल से मानव द्वारा पेड़ - पौधों का उपयोग किया जा रहा है। मानव समुदाय प्रकृति का ऋणी है। प्रकृति के उपकार के बिना मानव सभ्यता का अस्तित्व ही नहीं रहेगा। पेड़- पौधे हमारे शरीर में होने वाली बीमारियों से छुटकारा दिलाने में सहायक है।यही कारण है कि प्राचीन काल से ही मनुष्य अपने-आप को बीमारियों से सुरक्षित रखने के लिए विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों का उपयोग किया है। मानव सभ्यता के विकास के साथ ही औषधि विज्ञान ने भी तरक्की की है। यही कारण है कि भारतीय ग्रंथों में जडी-बूटी और उनकी विशेषताओं का गुणगान भरा पड़ा है। उदाहरण के लिए रामायण में संजीवनी बूटी की महिमा ही पढ़ लीजिए जिसमें मानव की प्राण रक्षा की बात को सहजता के साथ लोक भाषा में प्रस्तुत किया गया है।प्राचीन काल की जितनी भी विकसित सभ्यताएं थी उन सभी में औषधीय पौधों के उपयोग की सबल परंपरा थी। चाहे मिस्र की सभ्यता हो, यूनान की सभ्यता हो, बेबीलोन की सभ्यता हो, चीन की सभ्यता या सिन्धु घाटी की सभ्यता हो, सभी सभ्यताओं में बीमारियों के निदान के लिए अलग-अलग परम्पराएं विकसित की गई थी। इन परंपराओं में स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से निपटने के लिए औषधीय पौधों का महत्वपूर्ण स्थान था। आधुनिक समय में भी भारत में लोक परंपराओं के अतिरिक्त चार ऐसी औषधीय प्रणालियों का चलन है जिनमें औषधीय पौधों का उपयोग आवश्यक है। ये पद्धतियां हैं-आयुर्वेद, यूनानी, सिद्धा तथा तिब्बतन। वर्तमान समय में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति हो जिसने कभी भी एस्पिरीन का सेवन नहीं किया हो परन्तु बहुत कम लोगों को यह मालूम है कि इस दवाई की खोज में वोटैक्स सलायस नाम के वृक्ष ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । रोम तथा ग्रीस के लोगों को लगभग 400 ईसा पूर्व में ही यह जानकारी था कि इस वृक्ष की छाल में ऐसे गुण पाए जाते हैं जो दर्द को समाप्त कर सकते हैं, ज्वर को कम करता है, हालाँकि 19 वीं सदी में इसकी पहचान हो सकी और इस रासायनिक पदार्थ का नाम सेलेसीन दिया गया इसी से आगे चल कर एस्पिरीन का आविष्कार संभव हो सका। प्रस्तुत आलेख में औषधीय पौधों का ऐतिहासिक महत्व के साथ साथ प्रमुख औषधीय पौधों के उपयोग का विवरण दिया जा रहा है।

औषधीय पौधों का ऐतिहासिक महत्व

प्राचीन भारत में वैज्ञानिक उपलब्धियां तत्कालीन युग के अनुसार उन्नत स्तर की थी। प्राचीन भारत में विकसित चिकित्सा विज्ञान की देसी व्यवस्था आयुर्वेद है। आयुर्वेद का शाब्दिक अर्थ है अच्छा स्वास्थ्य एवं लंबी आयु। औषधि की प्राचीन भारतीय व्यवस्था ना केवल बीमारियों की चिकित्सा करने में सहायता करती है बल्कि यह बीमारियों का कारण और लक्षण भी मालूम करने का प्रयत्न करती है। यह स्वस्थ और बीमार दोनों की ही मार्गदर्शिका है। जड़ी बूटियों की औषधियों से किसी बीमारी की चिकित्सा करते हुए यह बीमारी की जड़ पर प्रहार करके उसके कारणों को दूर करने का उद्देश्य रखती है। आयुर्वेद का प्रमुख उद्देश्य स्वास्थ्य और दीर्घायु है। यह हमारी पृथ्वी का प्राचीनतम चिकित्साशास्त्र है । आयुर्वेद का एक ग्रन्थ 'आत्रेय संहिता' विश्व की प्राचीनतम पुस्तकों में से हैं। चरक को आयुर्वेदिक चिकित्सा का जनक कहा जाता है जबकि सुश्रुत को शल्य चिकित्सा का जनक। सुश्रुत, चरक,माधव, वांगभट और जीवक प्रसिद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सक थे। और ये सभी अपनी चिकित्सा कार्यों में औषधीय पौधों एवम जड़ी बूटियों को ही प्रयोग में लाते थे। सुश्रुत संहिता में प्रायः 1100 से भी अधिक बीमारियों का वर्णन है जिनमें 26 प्रकार के मूत्र-रोग दिए गए हैं।. 760 से भी अधिक जड़ी बूटियों का वर्णन किया गया है। पौधों की जड़ें, छाल, रस, फूल,, आदि सभी का प्रयोग किया जाता था। दालचीनी, तील,काली मिर्च, इलायची, अदरक आदि आज भी घरेलू औषधियों के रूप में प्रयोग की जाती है। चरक प्राचीन भारतीय औषध विज्ञान का जनक माना जाता है वह कनिष्क के दरबार में राजवैध था। उसकी औषध विज्ञान पर लिखी पुस्तक चरकसंहिता अति प्रशंसनीय ग्रंथ है। इसमें बहुत बड़ी संख्या में रोगों का वर्णन किया गया है और साथ ही उनके कारणों का पता लगाने की विधियों और उनके इलाज के तरीके भी बताए गए हैं। निवारण के तरीकों में विभिन्न औषधीय पेड़ पौधों और जड़ी बूटियों का वर्णन किया गया है।

मध्यकालीन भारत में आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति प्राचीन काल के समान उतनी उन्नति नहीं कर पायी फिर भी आयुर्वेद पर कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना हुई जैसे शंगगरधर संहिता और चिकित्सा संग्रह की रचना वंगसेन, यगर्तवर्ज और भावप्रकाश की रचना भावमिश्र ने

की। 13वीं शताब्दी में शंगगरधार संहिता लिखी गई जिसमें औषध बनाने की सामग्री में अफीम का भी उपयोग सम्मलित है।

वर्तमान समय में औषधीय पौधों के अनुप्रयोग को लेकर भारत सरकार का आयुष मंत्रालय कार्य कर रहा है। देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों जैसे झारखंड के बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, उत्तराखंड के गोविंद वल्लभ पंत विश्विद्यालय, पंतजलि विश्विद्यालय इत्यादि संस्थान औषधीय पेड़-पौधों एवं जड़ी-बूटियों के खोज एवं प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कई पाठ्यक्रम और अनुसंधान कार्य को संचालित कर रहे है। भारत उन गिने चुने देशों में जिन्हें उच्च जैव विविधता वाले देश का दर्जा दिया जाता है। इसका कारण है कि भारत में अनेक प्रकार के जीव पाए जाते हैं जिनमें वनस्पति तथा पशु दोनों ही है। इन दोनों में भारत अत्यधिक संपन्न है और बहुत सारे पेड़ पौधे तथा पशु पक्षी ऐसे हैं जो केवल भारत में ही पाए जाते हैं अर्थात भारत के स्थानीय हैं। विभिन्न प्रकार के पेड़ पौधों में ऐसे पेड़ पौधे भी हैं जिनमें औषधीय गुण होते हैं जिनका उपयोग भारत में सदियों से होता रहा है और भारत को इस संबंध में खास स्थान प्राप्त है| आज भी भारत में करोड़ों लोग ऐसे हैं जो सीधे जड़ी बूटियों से अपनी बीमारियों का इलाज करते हैं या ऐसी दवाओं का उपयोग करते हैं जिनका आधार जड़ी बूटियां ही हैं।

मलेरिया जैसे बुखार के इलाज के लिए कुईनिन रसायन का प्रयोग 19वीं सदी से किया जा रहा है, जिसका उत्पादन भी सिनकोना वृक्ष के छाल से किया जाता है। महिलाओं के प्रजनन से संबंधित कैंसर के उपचार के लिए 'टैक्सोल' नामक रसायन का प्रयोग किया जाता है, जिसका उपयोग 1992 से शुरू हुआ। स्तन कैंसर के उपचार के लिए 1994 से टैक्सोल की अनुमति मिली। इस समय टैक्सोल औषधि का उत्पादन बिरमी जिसका बैज्ञानिक नाम टैक्ससबैकुटाहै, उसकी पतियों से होता है। एक अन्य साधारण पौधा है 'भुई आमला' जिसका बैज्ञानिक नाम फायलेंथसअमेरस है। अमेरिका के एक मशहूर वैज्ञानिक डॉ वी. एस. ब्लूमबर्ग को इस पौधे के बारे में उनके भारत दौरे के समय जानकारी प्राप्त हुई थी। इस पौधे का उपयोग पुरातन समय से ही भारत मे लिवर सबंधी बीमारियों तथा पीलिया के उपचार में किया जा रहा है। डॉ ब्लूमबर्ग ने शोध के माध्यम से यह सिद्ध किया कि भुई आमला का उपयोग हेपेटाइटिस-बी जैसी खतरनाक रोग के उपचार में भी किया जा सकता है| उन्होंने इस पौधे से संबंधित दो पेटेंट अधिकार भी अपने नाम करवाए हैं।

प्रमुख औषधीय पौधें एवं इनका उपयोग

औषधीय पौधों को भोजन, औषधि, खुशबू, स्वाद, रंजक और भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में अन्य मदों के रूप में उपयोग किया जाता है। औषधीय पौधों का महत्व उसमें पाए जाने वाले रसायन के कारण होता है। औषधीय पौधों का उपयोग मानसिक रोगों, मिर्गी, पागलपन तथा मंद-बुद्धि के उपचार में किया जाता है। औषधीय पौधे कफ एवं वात का शमन करने, पीलिया, आँव, हैजा, फेफड़ा, अण्डकोष, तंत्रिका विकार, दीपन, पाचन, उन्माद, रक्त शोधक, ज्वर नाशक, स्मृति एवं बुद्धि का विकास करने, मधुमेह, मलेरिया एवं बलवर्धक, त्वचा रोगों एवं ज्वर आदि में लाभकारी हैं।

चिरायता / भुईनीम:- छोटानागपुर के जगलों में प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला 1-3 फीट तथा उसकी अनेक शाखाएँ पतली–पतली होती है। इसकी पत्तियां नुकीली, भालाकर, 3-4 इंच लम्बी तथा एक से सवा इंच चौड़ी होती है। फूल छोटे हल्के गुलाबी और सफ़ेद रंग के होते हैं। यह बरसात के दिनों में पनपता है और जाड़े में फल तथा फूल लगते हैं। यह स्वाद में कड़वा होता है।

तुलसी:- तुलसी या औषधीय पौधों की रानी एक ऐसा पौधा है जो लगभग सभी के घर में होता है| यह पौधा हिंदू धर्म में काफी महत्व रखता है. लेकिन यह सिर्फ धार्मिक महत्व ही नहीं सेहत से जुड़े लाभ भी देता है| तुलसी की मजबूत सुगंध बैक्टीरिया के विकास को रोकने के लिए पर्याप्त है| यह अपने चिकित्सा गुणों के लिए जाना जाता है| यह आपको तनाव से लड़ने की ताकत देता है,लंबे जीवन को बढ़ावा देता है,खांसी का इलाज करता है,अपच का इलाज करता है,विरोधी कैंसर,बालों के झड़ने, ह्रदय रोगों, मधुमेह, आदि के लिए अच्छा है।

पुदीना:- यह ताजा सुगंधित औषधीय पौधा कई तरह से इस्तेमाल किया जाता है. अपने मनोदशा को बढ़ाने से लेकर अपच का इलाज करने तक, पुदीना यह सब कर सकता है. इस पौधे को बढ़ने के लिए बहुत अधिक पानी की जरूरत होती है. इसलिए इसके बीजों को अधिक पानी वाले स्थानों में बोया जाता है। पुदीना में कीट और कीड़ों को पीछे हटाने की क्षमता है| इसलिए पुदीना के फायदे कुछ ऐसे होते हैं- पाचन तंत्र को दुरुस्त रखता है, प्रतिरक्षा बढ़ाता है, मूड बढ़ाता है, शरीर से खांसी को बाहर निकालता है, मच्छरों को दूर रखता है।

लेमन ग्रास:-लेमन ग्रास एक औषधीय पौधा है, जिसे आसानी से घर पर उगाया जा सकता है। इसे एक छोटे बर्तन में भी उगाया जा सकता है| रिपोर्टों से साबित हुआ है कि लेमन ग्रास के असंख्य चिकित्सीय और अन्य स्वास्थ्य लाभ हैं| यह चाय, सलाद, सूप और नींबू के साथ लगभग सभी व्यंजनों में बहुत अच्छा लगता है| लेमन ग्रास नर्वस तनाव संबंधी स्थितियों के लिए बहुत फायदेमंद है| इसमें मौजूद

एंटी-पाइरेक्टिक गुण तेज बुखार को कम करने में मदद कर सकते हैं| यह कुछ श्वसन स्थितियों और गले में खराश के संक्रमण में भी सहायक है | यह पेट दर्द, सिरदर्द, जोड़ों के दर्द, मांसपेशियों में दर्द, पाचन तंत्र की ऐंठन, मांसपेशियों में ऐंठन और पेट में दर्द सहित सभी प्रकार के दर्द के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है |

सहिजन / मुनगा:-सहिजन एक लोकप्रिय पेड़ है।जिसकी ऊंचाई 10 मीटर या अधिक होती है । इसके छालों में लसलसा गोंद पाया जाता है। इसके पत्ते छोटे और गोल होते हैं तथा फूल सफेद होते हैं।इसके फूल पते और फल (जोकी) खाने में इस्तेमाल में लाये जाते हैं। इसके पत्ते आयरन (लौह) के प्रमुख स्रोत हैं जो गर्भवती माताओं के लिए लाभदायक है ।

गोटू कोला या ब्राम्ही:-गोटू कोला या ब्राम्ही घर पर आसानी से बढ़ने वाला पौधा है | यह मस्तिष्क के विकास और स्मृति के लिए एक उत्कृष्ट पौधा है. यह छोटा सा औषधीय पौधा अल्सर, त्वचा की चोटों और केशिका की नाजुकता को कम कर के चमत्कार साबित हो सकता है,. इसके पत्तियों को भी पीसकर कर खुले घावों के इलाज के लिए उपयोग किया जा सकता है | ब्राह्मी मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र को पुनर्जीवित करती है, जिससे ध्यान अवधि और एकाग्रता बढ़ती है।

बहेड़ा:-बहेड़ा का पेड़ 15- 125 फीट ऊँचा पाया जाता है, इसका ताना गोल एवं आकार में लम्बा , 8 -35 फीट तक के घेरे वाला होता है।इसकी छाल तोड़ी कालिमा उक्त भूरी और खुरदुरी होती है।इसके फल, फूल, बीज, वृक्ष की छाल , पत्ते तथा लकड़ी सभी दवा के काम में आते हैं ।

हर्रे:- यह एक बड़ा वृक्ष है।इसके फल कच्चे में हरे तथा पकने पर पीले धूमिल रंग के होते हैं।इसके फल शीत काल में लगते हैं जिसे जनवरी – अप्रैल में जमा किया जाता है।इसके छाल भूरे रंग के होते हैं।इसके फूल छोटे, पीताभ तथा फल 1-2 इंच लम्बे , अंडाकार होते हैं ।

पलाश:- पलाश के पेड़ 5 फीट से लेकर 15-20 फीट या ज्यादा ऊँचे भी होते हैं।इसके एक ही डंठल में तीन पत्ते एक साथ होते हैं।बसंत ऋतू में इसमे केसरिया लाल राग के फूल लगते हैं तब पूरा वृक्ष दूर से लाल दिखाई देता है ।

शतावर:- यह बहुत खूबसूरत झाड़ीनुमा पौधा है।जिसे लोग सजाने के कम में भी लाते हैं।इसके पत्ते पतले , नुकिलेदार हरे-भरे होते हैं। इसके फूल देखने में बहुत छोटे – छोटे , सफ़ेद रंग के सुगन्धित होते हैं। इसके फल हरे रंग के होते है जो पकने पर काले रंग के हो जाते हैं। इसकी जड़ आयुर्वेद के क्षेत्र में उपयोगी है जो इस्तेमाल में लायी जाती है।

इसके अतिरिक्त हज़ारों प्रकार के औषधीय पौधों एवं जड़ी बूटियां पाई जाती है जिनका उल्लेख कर पाना यहाँ संभव नही है। औषधीय पौधों का व्यापक महता है। इसका उपयोग तो स्वास्थ्य संबंधी समस्या के लिये तो होता ही है लेकिन इसके आर्थिक महत्व भी है। बहुत सारे उद्योग सस पर आधारित है, उत्पादित वस्तुओं के निर्यात से विदेशी मुद्रा की प्राप्ति भी होती है।

निष्कर्ष:- निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि औषधीय पौधों का बहुत ही व्यापक महत्व है। औषधीय पौधों का प्रयोग ने भारत का नाम को विश्व पटल पर क्षितिज तक पहुंचाया है। साथ ही इसके फायदे ने मानव समुदाय के लिए आमूलचूल क्रांति लाई है। स्वास्थ्य व्यवस्था को मजबूत किया है। प्रकृति से निकटता को सार्थक किया है। भारत से औषधीय उत्पादों का निर्यात को बढ़ावा दिया है जिससे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति हुई है । भारत की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता को गौरवान्वित किया है। वर्तमान समय में औषधीय पौधों एवं जड़ी बूटियों के खोज और अनुसंधान कार्य को बढ़ावा देने के लिए कई प्रयास किए जा रहे हैं और संरक्षण के भी उपाय किए जा रहे हैं। भारत के विभिन्न प्रदेशों के जंगल एवं पहाड़ों पर औषधीय पेड़ पौधों की उपलब्धता प्रचुर मात्रा में है जिसे सामने लाना अति आवश्यक है। भारत की समृद्ध जैव विविधता का संरक्षण विभिन्न वन कानूनों के द्वारा किया जाता है। भारत के प्रत्येक नागरिकों का भी संवैधानिक कर्तव्य है कि वह पर्यावरण की रक्षा करें। जिसमें औषधीय पौधों के भी सरंक्षण शामिल हैं।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 29 (2021)

बिहार की जन-जातियों द्वारा देशी पटुआ (*कॉर्कोरस ओलिटोरियस*) से रेशे निकालने की पारम्परिक विधि एवं उपयोग

पंकज ढोले*, मोनिका मिश्र*, आर. सरवनन* एवं हरीश सिंह**

*भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, हावड़ा

**भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

कॉर्कोरस ओलिटोरियस

बिहार राज्य को लोकवानस्पतिक अध्ययन की दृष्टि से एक आदर्श राज्य माना जाता है जो पेड़-पौधों के साथ-साथ जातीय विविधता में भी समृद्ध है। बिहार में कुल 5720 वर्ग कि.मी. वन क्षेत्र है, जिसमें 3372 वर्ग कि.मी. घने जंगल और 2348 वर्ग कि.मी. खुले वन हैं। राज्य में जन-जातियों की कुल जनसंख्या 7, 58, 351 है। जिनमें से संथाल आदिवासी समुदाय सबसे अधिक (3, 67,612) तथा उसके पश्चात बाद क्रमश: ओरांव (1, 20,362), खरवार (1, 00,735), गोंड (51,792), मुंडा (17, 754), लोहारा (13,993) आदि हैं। इनके अतिरिक्त राज्य में असुर, बैगा, बथुडी, बेदिया, बिरहोर, चीरो, गोंड, हो, करमाली, खारिया, खरवार, खोंड, मुंडा, उरांव, पहाड़िया, संथाल, सावर, आदि महत्वपूर्ण जनजातीय निवास करती हैं। बिहार के अत्यधिक आदिवासी आबादी वाले जिलों में प्रमुख रूप से कटिहार, पूर्णिया, बांका, जमुई, भागलपुर, किशनगंज, पशिम चंपारण, कैमूर, अररिया, रोहतास आदि हैं। बिहार के इन वन्य क्षेत्र में पेड़ -पौधों की बहुत सी प्रजातियां पायी जाती हैं जिसे वहाँ के आदिवासी व स्थानीय लोग सदियों से औषधीय, खाद्य, तेल, पशु चिकित्सा, दातुन, भवन निर्माण, घरेलू कृषि उपकरण, कीट नाशक, चारा, ईंधन एवं धार्मिक कार्य हेतु उपयोग करते आ रहे हैं। किन्तु धीरे-धीरे जनजातियों की इन परम्परागत संस्कृति के साथ-साथ पेड़-पौधों के उपयोग का पारंपरिक ज्ञान भी दिन-प्रतिदिन घटता जा रहा है। अत: लेखकों द्वारा वर्ष 2018 से बिहार राज्य के आदिवासी क्षेत्रों से इस प्रकार के बहुमूल्य पारम्परिक ज्ञान को उनके सम्पूर्ण रूप से नष्ट होने से पहले एकत्रित, समेकित तथ लिपिबद्ध करने के उद्देश्य से एक प्रोजेक्ट के अंतर्गत अध्ययन किया गया | इस दौरान लगभग 650 उपयोगी पौधों की वैज्ञानिक पहचान कर उनके 1170 से अधिक विभिन्न उपयोगों को एकत्रित किया गया, जिनमे से कई पौधों के उपयोग के साथ साथ उनके बनाने व उपयोग की पारम्परिक विधि का भी प्रलेखीकरण किया गया | इनमे से एक पौधा जिसे स्थानीय भाषा में देसी पटुआ या पटुआ या पटसन कहा जाता है तथा जिसका वैज्ञानिक नाम कोर्कोरस ओलिटोरियस तथा कुल मालवेसी है, का विस्तृत विवरण प्रस्तुत लेख में किया जा रहा है:

बिहार के आदिवासियों द्वारा इस पौधे का उपयोग मुख्य रूप से खाद्य, औषधी, रेशे बनाने व ईंधन के लिए किया जाता है। यह एक-वर्षीय पौधा तराई क्षेत्रों में नैसर्गिक रूप से तथा खेतों में उगाया जाता है जो उष्ण समशीतोष्ण क्षेत्रों से लेकर उष्णकटिबंधीय मरुस्थल तथा नम वन क्षेत्रों में भी पाया जाता है। यह पौधा 1.5 मीटर से 4 मीटर ऊँचा, स्तंभित तथा घनी शाखा युक्त होता है (चित्र-1)। स्थानीय लोग इसकी नई कोमल पत्तियों को सब्जी के रूप में पका कर खाते है तथा इसकी पत्तियों का उपयोग बुखार, दर्द, बवासीर और ट्यूमर के इलाज लिए भी करते हैं। किन्तु इस राज्य में इसे मुख्य रूप से रेशे (फाइबर) के उत्पादन के लिए उगाया जाता है। जब पौधा 4 - 5 मीटर तक बढ़ जाता है, तब फसल को काटकर दो-तीन दिन के लिये सूखी जमीन पर छोड़ देते हैं, जिससे पत्तियाँ सूख या सड़ कर गिर पड़ती हैं (चित्र-2)। तब डंठलों को गठ्ठरों में बाँधकर छोड़ देते हैं। (चित्र-3)। अब पौधे को गलाने के लिये पानी मे छोड़ दिया जाता है (चित्र-4)। इस प्रक्रिया में दो दिन से लेकर एक मास तक का समय लगता है | तथा इस विधि को अपगलन (रेटिंग) कहा जाता है | रेशा निकालने वाला व्यक्ति पानी में खड़ा रहकर, डंठल का एक मूठा लेकर जड़ के निकट वाले छोर को छानी या मुँगरी से मार-मार कर समस्त डंठल छीलता है(चित्र-5)। रेशे निकलने की इस प्रक्रिया को स्टॉपिंग कहा जाता है| तत्पश्चात इन रेशों को सुखाने के लिए धूप में रख दिया जाता है|(चित्र-6)। रेशे अच्छी तरह सूखने के बाद उसे बाजार में रु. 40 - 50 प्रति कि.ग्रा. की दर से बेचा जाता है | इन रेशों को जूट कहा जाता है जिनका प्रयोग ऊन, सुतली, बोरी, कालीन के अतिरिक्त अनेक प्रकार के कपड़े और अन्य मिश्रित वस्त्र बनाने में किया जाता है| इसे डोरियों और तारों के लिए कच्चे माल के रूप में भी उपयोग किया जाता है। रेशे निकालने के बाद सूखी लकड़ी को जलाकर ईंधन तथा झोपड़ियों की छत बनाने के काम में लिया जाता है (चित्र-7)। अत: इस प्रकार के बहु-उपयोगी पौधों को चिन्हित कर उनके उपयोगों के साथ साथ उनके बनाने की पारम्परिक विधियों का भी प्रचार-प्रसार करना चाहिए जिससे कि आने वाली पीढ़ी भी इस प्रकार के लुप्त-प्राय ज्ञान का उपयोग कर अपने दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के अतिरिक्त अपनी आर्थिक उन्नति भी कर सके |

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 30 (2021)

मोमोरडिका कोचीनचाइनेनसिस (लाँर) स्प्रेन्ज - एक महत्त्वपूर्ण औषधीय लता

फौज़िया सलीम एवं लाल जी सिंह

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान एवं निकोबार क्षेत्रीय केन्द्र, पोर्ट ब्लेयर

मोमोरडिका कोचीनचाइनेनसिस (लाँर) स्प्रेन्ज.

मोमोरडिका कोचीनचाइनेनसिस (लाँर) स्प्रेन्ज. कुकरबिटेसी कुल का एक औषधीय पौधा है जिसे सामान्यतः गाक, सपाइनी कुकमबर के नाम से भी जाना जाता है। लगभग 15 मी. की लंबाई तक फैलने वाली इस आरोही लता की पत्तियाँ सरल, वैकल्पिक 10.15 सेमी. की होती है, जिसमें तीन से सात गर्त होते हैं। फल आमतौर पर गोल या दीर्घाकार, लगभग 13 से मी. से लंबा और 10 से मी. व्यास का होता है। एक पौधे में 30.60 फल लगते हैं, जलवायु और पौधों की उम्र जैसे कारकों पर निर्भर करता है। गाक के बीज भूरे रंग के और लगभग एक चौथाई इंच के होते हैं।

परम्परागत रूप से गाक को इसके औषधीय और पोषक गुणों के लिए जाना जाता है। जैव-रासायनिक अध्ययन® के अनुसार, गाक के फल में पोषक तत्व होते हैं, जो कैंसर को रोकने और कैंसर कोशिकाओं के गुणन को धीमा करने के लिए कारगर होते है। इसके फल में विटामिन, बीटा कैरोटीन और ऐसे पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, जो मुख्य रूप से त्वचा की समस्याओं, हृदय रोग, मोतियाबिंद और अन्य आखों की समस्याओं के निदान एवं उपचार में कारगर है। इसमे भरपूर मात्रा मे आयरन पाया जाता है यही कारण है इसके सेवन की सलाह एनीमिया के मरीज़ों को दी जाती है। इसके फल का उपयोग शरीर में अवांछित कोलेस्ट्रोल के उच्च स्तर को कम करता है। पत्तियों के उपयोग अर्क का प्रयोग आंतों से सम्बन्धित समस्याअ® जैसे पेट में ऐठन व दर्द में राहत मिलती है। गाक के बीज का लेप बाहय रूप से त्वचा के फटने और संक्रमण के उपचार मे उपयोग किया जाता है। फल के रस का उपयोग स्वास्थ्य वर्धक पेय के रूप मे किया जाता है और इसकी नवीन पत्तियों को परम्परागत पत्ता सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 31-34 (2021)

बहुउपयोगी *वरनोनिआ एमिगडेलिना* डेलिले (कड़वी पत्ती) का परिचय एवं संरक्षण

भावना जोशी और गिरिराज सिंह पंवार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून

वरनोनिआ एमिगडेलिना ऐस्टरेसी कुल का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बहुवर्षीय पौधा है। इसकी पत्तियाँ गहरे हरे रंग की तथा स्वाद में काफी कड़वी होती हैं इसी कारण इसे कड़वी पत्ती के नाम से भी जाना जाता है। दक्षिण अफ्रीका के विभिन्न देशों में इसे कई सारे स्थानीय नामों से भी जाना जाता है जैसे कि पोकोक बिसमिल्लाह (मलेशिया), इवोरु अनुगोबु ओरिवो (नाइजिरिया), ओमोबिरिजि मुलुजुआ (युगांडा), एबिचा (इथोपिया), ओमुबिलिजी (तंजानिया), अवोनवोनो (घाना), डाकुना कोसाफिना बतारा बुरुरे (गिनी), अलुमा गोबिडुबसी (येगो), नदोलेह यिंग (कैमरुन), और उमुबिलाजी (खांडा)। इस पूरे शाक का इस्तेमाल बुखार, हिचकी, गुरदे की समस्याओ, पेट दर्द, त्वचा संक्रमण और पेट से सम्बन्धित विकारो के निदान में किया जाता है।

वरनोनिआ वंश का नाम एक अंग्रेजी वनस्पतिशास्त्री विलियम वरनोन के नाम पर रखा गया हैं। जिन्होनें 1711 के दशक में अपनी मृत्यु से पहले 1600 के दशक में मैरीलैन्ड नामक स्थान पर इस पौधे की पहचान की थी। उपलब्ध साहित्य के आधार पर *वरनोनिआ* वंश ऐस्टरेसी परिवार का सबसे बड़ा वंश है। इस वंश की विश्व भर में 1000 जातियाँ पायी जाती हैं जो कि अफ्रीका के उष्ण कटिबन्धीय भागों, एशिया-अफ्रीका, उत्तर अमेरिका और दक्षिण अमेरिका में वितरित हैं। भारत में इस वंश की 56 जातियाँ तथा 15 किस्में हैं जो कि मध्य और पूर्वी भारत के कई स्थानों में पायी जाते है। *वरनोनिआ एमिगडेलिना* को यमन, इथोपिया, दक्षिण युगांडा, केन्या, तंजानिया और ब्राजील में अपनी आजीविका चलाने के लिए व्यापक रूप से इसकी खेती की जाती है।

आमतौर पर यह नदियों या झीलों के किनारों पर बने घास के मैदान, जंगल के किनारों पर 2800 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में ही पाया जाता है। *वरनोनिआ* वंश की सभी जातियाँ किसी भी प्राकृतिक आवास पर आसानी से अनुकुलित हो जाती हैं परन्तु आद्र वातावरण इसकी अच्छी वृद्वि में काफी कारगर साबित होता है। यह सभी प्रकार की मृदा में आसानी से जीवित रह सकता है लेकिन ह्यूमस युक्त मृदा में इसकी वृद्वि सबसे अधिक हौती। यह शुष्क वातावरण को भी सहजता से सहन कर लेता है और सभी प्रकार की मृदा में अच्छी तरह से विकसित होता है। कई सारे स्थानों पर इसे अंतर-फसल के रूप में भी उगाया जाता है क्योंकि यह पोषक तत्वों के लिए दूसरी फसल से स्पर्धा नहीं करता है। इसकी उपस्थिती से मृदा की उर्वरक क्षमता में वृद्वि होती है और साथ ही बारहमासी फसलो की गुणवत्ता में काफी सुधार होता है।

वरनोनिआ एमिगडेलिना एक झाड़ीदार बहुवर्षीय पौधा है जो 10 मीटर तक उुंचा होती है। इसकी छाल खुरदरी, हल्के भूरे रंग की और शाखाए भंगुर होती हैं। इसकी पत्तियां 28 × 10 से.मी. तक लैन्सियोलेट व तिरछी, मुलायम, गहरे हरे रंग की होती हैं तथा कुछ पत्तियों की ऊपरी सतह पतले मुलायम बालों से ढ़की रहती हैं। पत्तियां का शीर्ष और आधार

चित्र 1: *वरनोनिया एमिगडेलिना* का झाड़ीदार पौधा

हमेशा पतला होता है तथा किनारा दाँतेदार होता है। इनके फुल सफेद व हल्के गुलाबी रंग के तथा सुरक्षित होते है । इनके फल छोटे व नट के हौते है । फलों की पूरी सतह सूक्ष्म बोलों से ढ़की होती है तथा फलों के शीर्ष पर बड़े बड़े बालों का समूह पाया जाता है।

इस पौधे में विभिन्न प्रकार के क्रियाशील तत्व पाये जाते हैं जैसे सेस्क्वीटरपीन लैक्टोन, वरनोडेलिन, वरनोएमिगडेलिन, स्टीरोईडल सैपोनिन, स्टीरोईड ग्लाइकोसाइड (वरनोनिओसाइड बी1, वरनोनिओल बी1) और फलैवेनोइड। यह सभी तत्व शारीरिक गतिविधियों को सुचारू रूप से संचालित करने के कार्य में पूर्ण योगदान देते हैं। पूर्व में प्रकाशित शोधों में किए गए सभी परिक्षणों के परिणाम से यह निष्कर्ष निकलता है कि इस पौधे में उपस्थित सेस्क्वीटरपीन लैक्टोन एक मुख्य रासायनिक तत्व है जो कि विभिन्न प्रकार की जैव रासायनिक गतिविधियों को संचालित करने वाला एक प्रमुख घटक है। इनमें विभिन्न प्रकार के औषधीय गुण पाये जाते हैं जैसे एंटीफीडेन्ट, कृमिनाशक, एंटीसिस्टोसोमल, एंटीप्लाजोमिडियल, एंटीआक्सीडैन्ट और एंटीकैन्सरस आदि। इसकी पत्तियो से निकला अर्क पशुओ में हाईपर ग्लाइसीमिक और हाईपर लिपिडेमिक जैसी गतिविधियो में रामबाण का काम करता है।

प्लेट-1: *वरनोनिया एमिगडेलिना* का पादप ऊतक संवर्धन: 1 एवं 2. तनों के शीर्ष भाग से नये तनों का सूत्रपात; 3. नये तनों का प्रसारण; 4. पूर्ण विकसित तनें; 5 एवं 6. जड़ों का विकास एवं प्रसारण; 7. पूर्ण विकसित जड़े; 8. अनुकूलित पौधों का खुले वातावरण में स्थानान्तरण।

वरनोनिआ एमिगडेलिना के सभी भाग औषधीय रूप से अति महत्वपूर्ण हैं परन्तु इसकी जड़ें जड़ी बूटी की दवाओं को तैयार करने में मुख्यतः प्रयोग होती हैं। इसकी कोमल शाखाओं को दाँतों को साफ करने में उपयोग किया जाता है और यह मसुड़ों पर बने घावों को ठीक करने, दाँतों से खून आने, उन्हें रोग निरोधी बनाने, एंटीमाइक्रोबियल गतिविधियों और दाँतों से जीवाणुआँ को हटाने में काफी कारगर है। पश्चिम और मध्य अफ्रीका में इसकी पत्तियों को कई प्रकार के व्यंजन बनाने में तथा कई प्रकार के व्यंजन के साथ खाने में भी उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियों को काटकर, उबालकर और मुटठी के आकार के गोले बनाकर भी बाजार में बेचा जाता है।

नाइजिरिया में इसके पत्तों को उबालकर इसका सूप बनाया जाता है जो स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। कैमरून में इसकी प्रोसेस्ड पत्तियों को माँस और झीगे के साथ पकाया जाता है और पिसी हुई मूँगफली को इसके साथ में मिलाकर एन्डोल नामक एक वृंयजन बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसकी पत्तियों को कसावा य रतालु के कन्द के साथ भी पकाया जाता है। इसकी सूखी पत्तियों का पाउडर सूप बनाने में उपयोग किया जाता है। कैमरून में इसकी पत्तियों को कच्चे तेल व ताड़ के तेल के साथ नमक मिलाकर भी खाया जाता है।

इसकी जड़ों का उपयोग बुखार, हिचकी, गुरदे व रवानी पेट की समस्याओ के निवारण हेतु किया जाता है जबकि जड़ों का अर्क पेट दर्द तथा त्वचा के संक्रमण में राहत के लिए उपयोग किया जाता है। नाइजिरिया में इसकी पत्तियों से कड़वा सूप तैयार किया जाता है और कुछ जगहों पर इसकी पत्तियों को बकरियों भी खाती है। इसकी पत्तियों का अर्क विभिन्न प्रकार की बीमारियों पर कारगर है। अफ्रीका के बहुत से देशों में इसको क्युनीन के स्थान पर मलेरिया के उपचार के लिए भी उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियों का उपयोग महिलाओ की प्रजनन क्षमता को बढ़ाने तथा परजीवी बिमारियो जैसे कि अमीबिक पेचिश, शिसटोसोमियासिस, हेलमिन्थोसिस तथा अन्य बिमारियाँ जैसे की हिचकी, टाइफाइड, बुखार, पेट दर्द, खसरा, फोड़े, जलन, मधुमेह, पीलिया और सूजन को ठीक करने के लिए भी उपयोग किया जाता है। दूध पिलाने वाली महिलाआँ के स्तन में दूध बढ़ाने के लिए भी इसकी पत्तियों का उपयोग किया जाता है। तरुण शाखाओं का उपयोग लोक चिकित्सा पद्वति में एंटीहेलमन्थिक, मलेरिया रोधी, एनीमा और कृमि के नाश में उपयोग किया जाता है। नाइजिरिया में इसकी पत्तियों को आयोडीन के विकल्प के रूप में घाव वाले स्थान में भी उपयोग किया जाता है।

वरनोनिआ एमिगडेलिना की पत्तियाँ स्तन कैंसर में इस्ट्रोजन रिसेप्टर की कोशिकाओं के प्रसार को रोकने का काम करती हैं। इसकी पत्तियाँ प्रोस्टेट कैंसर के उपचार के विकास के लिए नई संभावनाओं को प्रर्दशित करता है।

कड़वी पत्ती में पॉली अनसैचुरेरटेड फैटी एसिड लिनोनिक और लिनोलेनिक पाये जाते हैं यह हृदय, लीवर व किडनी से संबधित रोगों के निवारण हेतू कारगर हैं। यह जोड़ों के सूजन को कम करता है और गठिया के दर्द के साथ सामान्य दर्द को भी कम करता है। इसके अतिरिक्त यह शिशु जन्म के दौरान संकुचन में सुधार करने हेतु व मसूड़े की सूजन को कम करने हेतु तथा यौन रोगों के उपचार में भी कारगर है।

वरनोनिआ एमिगडेलिना का पौधा ईधंन और जानवरों के चारे के रूप में भी उपयोग किया जाता है। इस पौधे को खेतों की मेड़ों पर बाड़ के रूप में लगाया जाता है क्योंकि यह 10 मीटर तक उँचा बढ़ सकता है। इसके कड़वे स्वाद के कारण इसे शराब के कारखाने में (माल्ट-बीयर) माइक्रोबियल गतिविधियों को नियन्त्रित करने हेतु भी उपयोग किया जाता है। इथोपिया में इसका उपयोग तेई नामक शहद की शराब के निर्माण हेतु उपयोग किया जाता है। *वरनोनिआ* एमिगडेलिना के पौधे की राख बीज जनित कवक को भूमि में नियन्त्रित करने साथ ही बीजों की अंकुरण क्षमता को बढ़ाने का काम करती है।

मूल पौधे को कायिक प्रवर्धन की सबसे अच्छी सामिग्री माना जाता है। इस कार्य के लिए पर्णसंधि को मूल पौधे के मध्य भाग से लिया जाता है। जिसको ह्मुमस, कोकोपीट एव रेत के मिश्रण में 3:2:1 के अनुपात में लेकर जड़ के विकास हेतु इस मिश्रण में लगाकर छायादार वातावरण में रख दिया जाता है। ग्रीष्म ऋतु में नियमित रूप से दो बार इस पौधे को पानी दिया जाना चाहिए जिससे की यथाशीघ्र, इस पौधे की वृद्धि और विकास हो सके। इस पौधे से अत्याधिक उपज केवल वर्षा ऋतु में ही प्राप्त की जाती है इसलिए इसकी पुरानी शाखाओं की छटाई भी केवल वर्षा ऋतु में ही की जाती है। मात्र तीन हफ्तों के अन्दर ही मुख्य पौधे से नयी शाखाओं का विकास आरम्भ हो जाता है। यह एक लघु चक्र वाली फसल है और इसकी पत्तियों को इसकी बुआई के तीन हफ्तो के अन्दर ही काट लिया जाता है क्योकि इस समय इसमें उपस्थित सक्रिय संघटकों की मात्रा बहुत ज्यादा होती है।

वरनोनिआ एमिगडेलिना की जड़ विभिन्न प्रकार के सक्रिय संघटकों का भण्डारण है इसलिए यह जड़ी बूटी के रूप में कई व्यााधियो के उपचार हेतु उपयोग की जाती है। औषधीय जगत में लगातार इसकी बढ़ती माँग, अत्याधिक दोहन व जलवायु परिवर्तन के कारण इस

मूल्यवान वनस्पति का अस्तित्व धीरे धीरे खतरे में आ गया है। कायिक प्रवर्धन/पारम्परिक तरीकों के माध्यम से इसका गुणन करने की बजाय हम ऊतक संवर्धन विधि के माध्यम से इसकी गुणन दर को बढ़ा सकते हैं और इसके फलस्वरुप प्रकृति में इसकी संख्या को संरक्षित कर सकते हैं तथा साथ साथ औषधीय उपयोग हेतु इसकी उपलब्धता को भी बढ़ाया जा सकता है। भारत में *वरनोनिआ* एमिगडेलिना की पत्तियों का विकृत रोग एक बड़ी समस्या है जिसके कारण इसकी पत्तियों की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है और वह विकृत हो जाती है। इसकी जड़े जड़ी बुटी तैयार करने की एक प्रमुख सामाग्री है पर मानव जाति का लगातार इसका दोहन करने से इसकी जड़ो का भी बहुत ज्यादा विनाश हो रहा है। इसलिए ऊतक संवर्धन तकनीक इसके गुणन तथा रोगाणुमुक्त पौधे तैयार करने तथा इसकी आबादी को नियन्त्रित रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इस तरह से हम इस जीनोटाइप का संरक्षण तथा इसके सतत उपयोग को भी नियन्त्रित कर सकते हैं।

वरनोनिआ एमिगडेलिना का पादप ऊतक संवर्धन विधि द्वारा संरक्षणः वरनोनिआ एमिगडेलिना की औषधिय जगत में अत्याधिक माँग तथा स्थानीय लोगों द्वारा लगातार इसका दोहन की स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस जाति को पादप ऊतक संवर्धन विधि द्वारा संरक्षित करके प्रकृति में इसके अस्तित्व और सतत उपयोग को बचाये रखने का प्रयास किया गया है। इसके ऊतक संवर्धन विधि की विभिन्न अवस्थायें निम्नलिखित हैं (प्लेट-1)।

इसके मुख्य पौधे से पूर्ण विकसित तनों के शीर्ष एवं पर्णसंधि भाग को बी. ए. पी. एवं एन. ए. ए. युक्त पादप वृद्धि नियंत्रकों से संपूरित एम. एस. माध्यम में प्रतिस्थापित कर तनों को प्रेरित किया जाता है। प्रतिस्थापित करने के करीब चार सप्ताह बाद तनों के शीर्ष भाग से नये तनों का विकास प्रारम्भ हो जाता है। विकसित तनों को 14 से 16 दिनों के बाद उपसंवर्धित किया जाता है और अन्त में करीब 60 से 70 पूर्ण विकसित तने प्राप्त होते हैं।

ऊतक संवर्धन विधि द्वारा विकसित इसके तनों को जड़ों के विकास हेतु मूल प्रेरण माध्यम में प्रतिस्थापित किया जाता है। मूल प्रेरण माध्यम विभिन्न ऑक्जिन जैसे आइ. बी. ए., आइ. ए. ए. एवं एन. ए. ए. की विभिन्न सान्द्रताओं से संपूरित किये गये विभिन्न लवणों युक्त एम. एस. पोषक माध्यम (पूर्ण, अर्द्ध एवं चौथाई मात्रा) में पूर्ण विकसित तनों को प्रतिस्थापित किया जाता है। पूर्ण विकसित तनों को प्रतिस्थापित करने के 7-14 दिन पश्चात अर्द्ध लवणों युक्त एम. एस. पोषक माध्यम में तने के निचले सिरे से जड़े निकलनी प्रारम्भ हो जाती हैं और करीब 20 दिन में पूर्ण विकसित जड़े प्राप्त हो जाती हैं।

पूर्ण रुप से विकसित *वरनोनिआ एमिगडेलिना* के पौधों को संवर्धन नलिका से बाहर निकालकर पहले भली-भाँति धुल लेते हैं और उसके उपरान्त उन्हें मृदा से भरे गमलों में स्थानान्तरित किया जाता है तथा गमलों को हरित गृह में रखा जाता है। हौगलैण्ड विलयन की 1:10 सान्द्रता के घोल वाला पानी पौधों को हर तीन दिन बाद दिया जाता है। धीरे-धीरे यह पौधे हरित गृह के वातावरण में अपने आप को ढाल लेते हैं और अन्ततः इन पौधों को नर्सरी या वनस्पति उद्यान में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। एक बार खुले वातावरण में अनुकूलित हो जाने के पश्चात इन पौधों को प्रकृति में इनके प्राकृतिक आवास में स्थानान्तरित कर दिया जाता है।

वरनोनिआ एमिगडेलिना जन समुदाय के लिए बहुत ही उपयोगी है। यह उपयोगिता केवल औषधीय उत्पादों तक ही सीमीत नही है अपितु इसका संयतर उपयोग जैविक कीटनाशकों व उर्वरकों के निर्माण के लिए भी किया जाता है। यह जानवरों के चारे के रुप में भी काम आता है। इसलिए इस औषधीय व बहुउपयोगिता वाले पौधे के संरक्षण, गुणन तथा इसके महत्व की जानकारी जन जन तक पहुँचनी चाहिए। जंगलों से इसके दोहन को कम करने के लिए तथा वर्ष भर इसकी आपूर्ति को सुनिश्चित करवाने में पादप ऊतक संवर्धन तकनीक एक अहम भूमिका निभाती है। भारत में पहली बार *वरनोनिआ एमिगडेलिना* का पादप ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा सफलता पूर्वक संरक्षण एवं पौधे विकसित किए गए है। भविष्य में इस पौधे पर और ज्यादा शोध की आवश्यक्ता है ताकि इस बहुउपयोगी पौधे के गुणों का लाभ मानव जाति को अधिक से अधिक मिल सके।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 35-40 (2021)

जिंगकिएंग जेरी - खासी जनजातियों की एक अद्भुत बायो-इंजीनियरिंग

जीवन सिंह जलाल

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

जिंगकिएंग जेरी एक खासी शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ है जीवित जड़ सेतु। खासी लोग उत्तर-पूर्वी भारत में मेघालय का एक प्रमुख जनजातिय जातीय समूह हैं, जो सीमावर्ती राज्य असम और बांग्लादेश के कुछ हिस्सों में एक महत्वपूर्ण आबादी में रहते हैं। इस जनजाति के अलावा गारो और जयंतिया भी मेघालय की महत्वपूर्ण जनजातियां हैं। भाषाई रूप से, खासी ऑस्ट्रो-एशियाई परिवार से सम्बन्ध रखते है और गारो तिब्बती-बर्मन परिवार से।

मेघालय भारत के सबसे छोटे राज्यों में से एक है और इसे मेघों का निवास स्थान से भी जाना जाता है। क्योंकि वर्ष में अधिकांश समय यहाँ के पहाड़ बादलों से घिरे रहते हैं। यह राज्य अपनी प्राकृतिक सुंदरता, बादलों से घिरे पहाडों, झरनों, गुफाओं और इन जीवित जड़ पुलों से हजारों विदेशी और स्वदेशी पर्यटकों को आकर्षित करता है। बचपन में हमने अपनी पाठ्य पुस्तकों में इनके बारे में पढा था और आज हमें यह सब देखने का अवसर मिला। हमारा चित्त यह सब सोचकर बहुत उत्साहित हो रहा था और ऐसा लग रहा था जैसे कोई बचपन का सपना सच हो गया हो। दरसल वर्ष 2021 के दिसंबर माह में विश्व बैंक समर्थित "मेघालय समुदाय के नेतृत्व वाली लैंडस्केप प्रबंधन परियोजना" के प्रबंधन से संस्थान के निदेशक महोदय को एक प्रस्ताव आया था। इस प्रस्ताव के अनुसार निदेशक महोदय को जीवित जड़ स्थलो के प्रारंभिक सर्वेक्षण का हिस्सा बनने के लिए कुछ विशेषज्ञ वैज्ञानिकों को नामित करना था। क्योंकि मेघालय सरकार जिंगकिएंग जेरी को यूनेस्को की विश्व धरोहरो में नामांकन के लिए एक संरक्षण, अनुसंधान और विकास योजना विकसित कर रही है। हम भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक महोदय के आभारी हैं कि उन्होने मुझे इस अभियान का हिस्सा बनाया। यह प्रस्तावित दौरा 14 दिसंबर से 22 दिसंबर 2021 के बीच निर्धारित किया गया था।

ल्यूकुलिया पिनसियाना

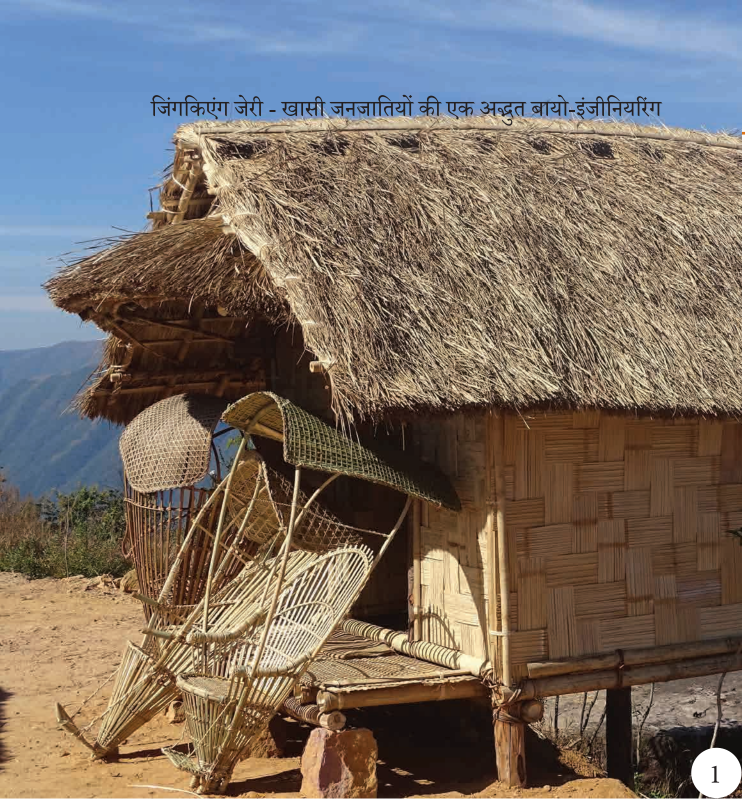

1. खासी लोगों के घर एक नमूना; 2. *प्लियोनी मैक्युलाटा*; 3. *थिसानोलाएना मैक्सिमा*

सभी सरकारी औपचारिकताओं और कोविड -19 प्रोटोकॉल को पूरा करने के बाद हमारी यात्रा 14 दिसंबर को कोलकाता से इस अभियान के लिए शुरू हुई। हम कोलकाता हवाई अड्डे पर वेटिंग लाउंज में फ्लाइट बोर्डिंग का इंतजार कर रहे थे, अचानक हमारे पीछे कुछ लोग जीवित जड़ सेतु के बारे में चर्चा कर रहे थे। बड़े उत्साह में हम उनके पास गए और एक-दूसरे का परिचय कराया और पाया कि वे भारतीय प्राणी सर्वेक्षण संस्थान, कोलकाता के वैज्ञानिक हैं और इस अभियान का एक हिस्सा भी हैं। लगभग एक घंटे की हवाई यात्रा पूरी करने के बाद उड़ान में एक घोषणा हुई कि हम उमरोई हवाई अड्डे, शिलांग में उतरने वाले हैं। मैं खिड़की वाली सीट पर बैठा था और बाहर का नजारा देखा कि हवाई जहाज छोटी-छोटी पहाड़ियों के समूह को पार कर रहा है और कुछ मिनटों के बाद यह उमरोई हवाई पट्टी पर उतर गया। विमान से उतरने के बाद हमने हवाई अड्डे पर कोविद -19 की औपचारिकताएँ पूरी कीं और कार पार्किंग स्थल की ओर चलना शुरू किया। यहां कारों के साथ दो ड्राइवर हमारा इंतजार कर रहे थे और आगे की यात्रा शुरू हुई। हमें शाम तक पोंटोंग पहुंचना था और यात्रा लगभग चार घंटे की थी। उमरोई से पोंटोंग के बीच की दूरी लगभग 76 किलोमीटर है। रास्ते में हमने लूकुलिया पिनसेना के खूबसूरत फूल देखे। यह एक अर्ध-कठोर, सदाबहार झाड़ी है जिसमें चौड़ी, अंडाकार पत्तियां होती हैं जो नरम और नीचे की ओर होती हैं। इसके फूल सुगंधित, मुलायम गुलाबी, ट्यूबलर आकार के बड़े गुच्छों में दिखाई देते हैं।

हम लगभग पाँच बजे पोंटोंग पहुँचे और शाम तक अन्य सभी वैज्ञानिकगण जो विभिन्न संस्थानों से आए थे वे भी इस स्थान पर पहुँच चुके थे। आज का रात्रि प्रवास की व्यवस्था यहां डेली बैर गेस्ट हाउस और पीटदेम रिजॉर्ट में की गई थी। मेघालय में पर्यटक अक्सर पोंटोंग क्षेत्र को नज़रअंदाज़ कर देते हैं क्योंकि यह दावकी और मावलिननॉन्ग के पुराने स्थलों के रास्ते में पड़ता है। लेकिन इस घने जंगल वाले क्षेत्र में पठारी और सुंदर सड़क मार्ग हैं। अगले दिन 15 दिसंबर को जब मैं सुबह उठा तो सूरज की रोशनी थोड़ी तेज हो गई थी लेकिन मैंने होटल की छत पर जाने का फैसला किया ताकि मैं इस जगह का मनमोहक दृश्य देख सकूं। छत से मैंने हरे-भरे, नम जंगलों, ढलानों, पठारी घास के मैदानों को देखा और पक्षियों की चहचहाहट को सुना। नाश्ते के समय हम भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून और पर्यावरण योजना और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बड़ौदा के वैज्ञानिकों से मिला।

नाश्ते के बाद हम सब रिसॉर्ट के बाहर इकट्ठे हुए और श्री संजीव शंकर जो इस सर्वेक्षण के समन्वयक थे और मेघालय बेसिन प्रबंधन प्राधिकरण, मेघालय सरकार के प्रतिनिधि भी थे उन्होंने सभी वैज्ञानिकों का स्वागत किया और अपना और अपनी टीम का परिचय दिया। श्री संजीव शंकर जी ने आगे की यात्रा और योजना के बारे में भी बताया।

अब सभी सदस्यगण कारों से लाइट सुथिम गांव के लिए रवाना हो गए। यह गांव पोंटोंग से लगभग 16 किमी दूरी पर स्थित है। लाइट सुथिम गांव से खासी पहाड़ों और साथ में हरी-भरी घाटियों का खूबसूरत नजारा दिखाई देता है। इसके पश्चिम में हम चेरापूंजी देख सकते हैं जो सबसे लोकप्रिय पर्यटन स्थलों में से एक है। रास्ते में हमने कई जगहों पर बड़े पत्थर के स्मारक देखे जो हमें बताए गए हैं कि इन्हें 'मावबिन्ना' के नाम से जाना जाता है। पुरातात्विक संदर्भ में ये 'मेगालिथिक' स्मारकों को संदर्भित करता है जो प्रतीकात्मक महत्व वाले बड़े पत्थरों से बने होते हैं। इन स्मारकों को पूर्वजों को श्रद्धांजलि के रूप में बनाया गया था।

लाइट सुथिम गांव से आगे की यात्रा अब पूरी तरह से पैदल थी। हमें यहाँ से सुथिम गाँव जाना था जो लगभग 3 किमी नीचे है। गांव जाने की सड़क पत्थर की बनी है जो खड़ी ढलानों से होके गुजरती है। घरेलू सामग्री के परिवहन के लिए लाइट सुथिम और सुथिम गांव के बीच एक केबल कार है। हमारे सभी सामान और वैज्ञानिक उपकरणों को इस केबल कार द्वारा ही नीचे ले जाया गया था। दो घंटे की पैदल यात्रा के बाद हम सब सुथिम गांव पहुंचे। यहां सभी अस्थायी व्यवस्थाएं आयोजक द्वारा की गई थीं और हमें बताया गया है कि टीम के सभी सदस्य अगले तीन दिनों तक इस शिविर में रहेंगे। दोपहर का भोजन करने के बाद आखिरकार वह समय आ गया जिसके लिए हमने इतनी दूरी तय की थी।

योजना के अनुसार हमें दो जीवित पुलों का सर्वेक्षण करना था जो इस गाँव के पास थे लेकिन उत्साह में हमने तीन पुलों का सर्वेक्षण कर दिया। पहला पुल वाहसोत था, जो एक छोटी सी नदी पर 12 से 18 फीट लंबा और 4 फीट चौड़ा था। इसे देखकर लग रहा था कि स्थानीय लोग इसका इस्तेमाल कम करते होंगे। हम सभी ने अवलोकन किया और हमारी टीम ने पहचान के लिए और एक सूची बनाने के लिए पौधों के नमूने एकत्र किए। इस पुल में कई एपिफाइटिक ऑर्किड थे लेकिन सभी कायिक स्थिति में थे इसलिए जातियों के स्तर पर उनकी पहचान करना बहुत मुश्किल था। हमें इस पुल के पास फूलों में एक बहुत ही दिलचस्प ऑर्किड प्रजाति प्लियोन मैक्युलाटा मिली है। सौभाग्य से हमें एक आर्किड प्रजाति पुष्पन अवस्था में मिली। उस फूल की जांच करने के बाद हमने उसकी पहचान *प्लियोनी मैक्युलाटा* के रूप में की।

इसके बाद हमने दूसरे पुल के लिए चलना शुरू किया जो लगभग 1.5 किमी नीचे था। रास्ता बहुत कठिन था और हम उस जगह तक पहुँचने के लिए घने बाँस के जंगल को पार किया। गाइड ने हमें बताया कि पुल का नाम उमलिंगोह है। यह पुल खड़ी घाटियों में स्थित था और लगभग 25 फीट लंबा और 5 फीट चौड़ा था। हमारी टीम ने यहां भी पौधों के नमूने एकत्र किए। हमें यहां भी एक आर्किड प्रजाति मिली हमने इसे बल्बोफिलम जिम्नोपस के रूप में उसकी पहचान की। अब यहाँ थोड़ा अँधेरा होने लग गया था और टीम के कुछ सदस्य चर्चा कर रहे थे कि तीसरे पुल पर जाना है या नहीं जाना क्योंकि यह पहाड़ी ढलान पर और नीचे था। कुछ लोग पूरी तरह से थक चुके थे और मानसिक रूप से और नीचे जाने के लिए तैयार नहीं थे। श्री संजीव शंकर जी ने सलाह दी कि जो लोग थका हुआ महसूस कर रहे हैं उन्हें नहीं जाना चाहिए। यहां से कुछ सदस्य बेस कैंप में लौट आए। लगभग एक किमी नीचे जाकर हम कोत्सिगे जीवित जड़ सेतु पर पहुँचे और तब तक अंधेरा हो चुका था। यह पुल देखने में पहले के दो जीवित जड़ सेतु की तुलना में शानदार था।

इन जीवित जड़ सेतु को बनाने वाली मुख्य प्रजाति फाईकस इलास्टिका है जो कि अंजीर जीनस की एक प्रजाति है और चट्टानी मिट्टी में मजबूत जड़ें उगाती है जिसे एक निश्चित दिशा में निर्देशित किया जा सकता है। आम तौर पर इसे भारतीय रबड़ वृक्ष के रूप में भी जाना जाता है | यह पेड़ मूल रूप से हिमालय से मलेशिया, सुमात्रा और जावा में पाया जाता है। यह उष्णकटिबंधीय पेड़ घने सदाबहार जंगलों में, विशेष रूप से नदी के किनारे विशाल शिलाखंडों पर उगता है और इसके शाखाओं से शानदार माध्यमिक जड़ें (प्रोप जड़ें) निकलती है। यह वृक्ष बोल्डर को पकड़ने और लैंड स्लाइड को रोकने में भी मदद करता है। यह तेजी से बहने वाली पहाड़ी धाराओं के साथ अच्छी तरह से अनुकूलित है। प्रकृति के आगे मानव ने कभी हार नहीं मानी। किसी भी कठिन परिस्थिति में मानव जाति ने अपने आप को अच्छे से अनुकूलित कर दिया।

कल्पना करें एक ऐसा सेतु जिसमें जीवन है। हालांकि यह कल्पना करना बहुत मुश्किल है लेकिन वास्तविकता में यह असंभव नहीं। यह खासी के पूर्वजों द्वारा किया गया यह एक अद्भुत सच्चाई है। कैसे इन उष्णकटिबंधीय जंगलों में जहां कोई उचित सड़क और रास्ता नहीं है फिर भी नदियों पर मजबूत जीवित जड़ सेतु को आकार दिया। यह एक अद्भुत सोच और जैव-इंजीनियरिंग है। स्थानीय लोगों ने नदी पार करने की अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए पेड़ का उपयोग किया है। उन्होंने युवा कोमल धागे जैसे जड़ों को सुपारी के खोखले अनुदैर्ध्य स्थिति में कटे हुए तने से गुजर कर आगे जाने के लिए निर्देशित करते हैं | यह तब तक किया जाता था जब तक जड़ें नदी के दूसरे छोर तक नहीं पहुंच जातीं। उसके बाद वे इन जड़ों को मिट्टी में प्रवेश करने देते हैं। जड़ें बढ़ती रहती हैं और एक पुल को पूरी तरह से काम करने में 15-20

साल लगते हैं। रास्ते में हम इन सब बातों पर चर्चा करते करते वापस सुथिम गांव अपने शिविर पहुंचे गए। tab तक बहुत अंधेरा हो गया था और मौसम भी बहुत ठंडा हो गया था। हमें बांस के गिलास में चाय दी गई। चाय पीने के बाद थोडा आराम महसूस हुआ। रात के खाने के बाद हमने कल की यात्रा के बारे में एक छोटी सी चर्चा की और उसके बाद सभी अपने शिविर में चले गए।

16 दिसंबर को नाश्ते के बाद हम सब टेरफा मावलोश जीवित जड़ सेतु देखने गए। रास्ता पहले वाले की तुलना में बहुत कठिन था। हम बांस के पुलों के मदद से आगे आगे बढ़ें जो इस अध्ययन के लिए अस्थायी रूप से बनाए गए थे। थिसानोलाएना मैक्सिमा जिसे ब्रूमग्रास के नाम से जाना जाता है, एक महत्वपूर्ण वन गैर लकड़ी उत्पाद है। गांव के पास ब्रूम घास बहुत उगाई गई थी, इन जनजातियों की आजीविका के लिए यह एक महत्वपूर्ण संसाधन है। यह चिंता का विषय है कि इस घास के रोपण के लिए जंगलों का एक बड़ा हिस्सा काट दिया गया है। रास्ते में हमें सिट्रस का एक छोटा बगीचा भी दिखाई दिया। पके हुए फलों को देखकर हमारा मन थोडा लालच मैं आ गया और हमने 2-4 फल बिना अनुमति के तोड़ के खा लिए। वानस्पतिक रूप से खासी क्षेत्र इन साइट्रस जातियों की उत्पत्ति उत्पत्ति का केंद्र भी माना जाता है। करीब तीन घंटे चलने के बाद हम पुल पर पहुंचे। यह पुल बहुत ही अद्भुत लग रहा था | हम इस पुल पर चढ़ गए और बहुत सारी तस्वीरें लीं। हमने इस स्थान पर लगभग एक घंटा बिताया और हमारी टीम ने पौधों के नमूने एकत्र किए। अब समय आ गया था कैंप मैं वापस जाने का। लेकिन इस मुश्किल चढ़ाई को देख कर हौसले पस्त हो रहे थे। हमने चढ़ाई के लिए मन तैयार किया और चलने लगा । शिविर तक पहुँचते पहुँचते अंधेरा हो गया था।

दो दिनों के कठोर ट्रेकिंग के बाद अधिकांश सदस्य थक गए थे। कुछ ने शिलांग वापस जाने का फैसला किया। हालाँकि, हमारे पास भी यह विकल्प था लेकिन हमने सुथिम गाँव के एक और पुल पर जाने का फैसला किया। 17 दिसंबर को हम लोग जिरिलंतांग पूल देखने निकल गए। खड़ी ढलान और संकीर्ण रास्ता पर चलने के बाद हम वहाँ पहुँच गए। हमने देखा कि यह पुल थोड़ा क्षतिग्रस्त था और जड़ों पर कुछ फंगल संक्रमण था। लेकिन हमने इस पुल को भी समाप्त कर दिया। स्थानीय ग्रामीणों ने हमें बताया कि इस पुल का उपयोग वे एक गाँव से

नोहवेट जीवित जड़ पुल

दूसरे गाँव तक कृषि उत्पाद को ले जाने के लिए अक्सर उपयोग करते हैं। शाम होते है होते हम लोग वापस शिविर मैं गए और आज यहां हम लोगो का अंतिम रात्रि विश्राम था। जैसे ही हम गाँव पहुँचे हमें बताया गया कि आज गाँव वालों ने हमारे लिए कुछ सांस्कृतिक कार्यक्रम रखा है।

श्री संजीव शंकर जी ने हमें पहिले से यह भी बताया था कि आज सभी विभाग अपने अपने अनुसंधान संक्षिप्त तरीके से और सरल तरीके से ग्रामीणों को पावरप्वाइंट के माध्यम से देंगे। उन्होंने खासी से अंग्रेजी में अनुवाद करने की व्यवस्था की थी। इस विचार का मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों के साथ संपर्क स्थापित करना था। एक बार जब वे इस परिदृश्य के पीछे के गहरे विज्ञान को समझ जाएंगे, तो वे इस खूबसूरत बायो-इंजीनियरिंग को यूनेस्को विश्व धरोहर में लाने के लिए आगे आएंगे। पावर प्वाइंट प्रेजेंटेशन में अपने आसपास की वनस्पतियों और जीवों की विविधता को देखने के बाद वे बहुत खुश और उत्साहित हो गए। उसके बाद उन्होंने अपना सांस्कृतिक नृत्य दिखाया और हम सभी ने इस यादगार रात का आनंद लिया।

18 दिसंबर की सुबह कुछ अलग थी क्योंकि आज हमें इस गांव को अलविदा कहना था। वास्तव में हम इन ग्रामीणों के आतिथ्य-सत्कार और व्यवहार को देखकर बहुत प्रसन्न हुए और बहुत भावुक भी हो गए। जब इस गांव को छोड़ने का समय आया तो सभी ने हाथ मिलाया और खासी में हमने सभी को "खुबलाई" जिसका अर्थ है धन्यवाद। आज हमें मिनरिंग गांव होते हुए वापस पोंटोंग जाना था। हमें एक पहाड़ की चोटी पार कर दूसरे पहाड़ पर जाना था। लगभग 1.5 किमी नीचे जाने के बाद हम मास्सियांग पिरडी जीवित जड़ सेतु के पास पहुँच गए। हमने यहां नमूना एकत्र किया और लगभग एक घंटा बिताकर हम मिनरिएंग की ओर जाने लगे। यहाँ तक सुथिम गांव के लोग हमारे साथ मदद के लिए आए और यहां से आगे के लिए मिनरिएंग गांव के लोग हमारा इंतजार कर रहे थे। एक युवा लड़का मिस्टर डेविड विल्सन जो हमारे साथ चल रहा था वो इस जगह के बारे में बहुत कुछ बता रहा था। बातों-बातों में हम मिनरिएंग गांव की सीमा तक पहुंच गए। यहां हमने अन्य सदस्यों का इंतजार किया और आखिरकार जब सब यहाँ पर पहुंच गए तब हम लोगो ने गांव में प्रवेश करना शुरू किया। जैसे ही हम गाँव के स्कूल पहुँचे गाँव के मुखिया ने हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया और अन्य कार्यकारी सदस्यों ने हाथ मिलाया। गाँव के मुखिया ने हमारे लिए सांस्कृतिक कार्यक्रम और स्थानीय भोजन की व्यवस्था की थी। खासी जनजाति प्रकृति की पूजा करते हैं। उनके लिए नदी, जंगल, पेड़ और पहाड़ सभी पवित्र स्थान हैं, जिनका मानवीय जरूरतों के लिए दोहन नहीं किया जाना चाहिए। खासी भाषा में एक कहावत है "एक खासी प्रकृति के साथ रहता है और प्रकृति उसके साथ रहती है"। खाना खाने के बाद हम मिनरिएंग गांव का जीवित जड़ सेतु देखने गए। सड़क निर्माण के कारण यह पुल अत्यधिक क्षतिग्रस्त हो गया था। पुल के नीचे बड़े बड़े बोल्डर फंस गए हैं। ग्रामीण इन बोल्डरों को हटाने का प्रयास कर रहे हैं। अब तक शाम भी हो गए थी और रोड हेड तक पहुंचने के लिए 3 किमी की खड़ी चढ़ाई बाकी थी। सड़क पर पहुंचने के बाद हम पोंतोंग होटल के लिए निकल पड़े।

अगले दिन 19 दिसंबर को हमने जयंतिया पहाड़ियों में जाने का फैसला किया। यहाँ भी कुछ जीवित जड़ सेतु हैं। वनस्पति की दृष्टि से भी यह क्षेत्र महत्वपूर्ण है। हमने सोचा कि हमें वहां कुछ दिलचस्प पौधे मिल सकते हैं। हमारे साथ डॉ. बी. एस. खोलिया जी भी थे, वे एक टेरिडोफाइट विशेषज्ञ हैं। उन्होंने भी जोर दिया कि टेरिडोफाइट की दृष्टि से वह स्थान समृद्ध है। ड्वाकी की ओर होते हुए हम लोग कुडेंगथिम्मई गाँव पहुँचे। इस गाँव से हमें पैदल चलकर जीवित सेतु स्थल की ओर जाना था। लगभग 1 किमी चलने के बाद हम उस जगह के पास पहुँचे। जीवित पुल के पास रास्ता बहुत ही खड़ा और पथरीला था। इन चट्टानों में हमें एक बहुत ही दिलचस्प पीले रंग का *स्पैथोग्लॉटिस* आर्किड मिला। ग्रामीणों ने हमें बताया कि जीवित जड़ पुल का नाम सुई सिंग कीव है। आग लगने के कारण यह पुल थोड़ा क्षतिग्रस्त हो गया था। ग्रामीणों ने लोहे के पाइप डाल कर इस पुल को सहारा दिया था। इस जगह से वापस आने के बाद हमने कुछ

स्पैथोग्लॉटिस एफिनिस के सुंदर फूल

समय उमंगोट नदी के किनारे बिताया। नदी का पानी इतना साफ था कि नदी के नीचे कंकड़-पत्थर भी दिखाई दे रहे थे। यह दुनिया की सबसे साफ नदियों में से एक है। मेघालय के लोगों को सलाम। अब दिन भी ढलने लग गया था और हम लोग वापस पोंटोंग की ओरो निकल पड़े।

अगले दिन 20 दिसंबर को सभी सदस्य शिलांग वापस जाने के लिए तैयार थे। लेकिन हमें बताया गया था कि रास्ते में वे हमें नोहवेट गांव में जीवित जड़ पुल दिखाने के लिए ले जाएंगे। क्योंकि पिछले एक सप्ताह में हमने जो भी जीवित जड़ पुल देखे, वे सभी पर्यटकों के पहुँच से परे थे। नोहवेट जीवित जड़ पुल देखने के लिए अच्छे- खासे पर्यटक आते हैं | इसलिए पर्यटकों के प्रभाव की तुलना करने के लिए यह हमारे लिए एक संदर्भ स्थल होगा। इस स्थान को देखने के बाद हमने देखा कि ग्रामीणों द्वारा बहुत सी विकासात्मक गतिविधियाँ की गई थीं, उदाहरण के लिए कंक्रीट पथ और दीवार निर्माण में सीमेंट का प्रयोग आदि। जीवित जड़ पुल के चारो ओर इस विकास कार्य से स्थानीय पर्यावरणविद् चिंतित हैं। यहां कुछ समय बिताने के बाद हम शिलांग के लिए रवाना हुए जहां हमें कल होने वाले राष्ट्रीय अधिवेशन में अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करने थे।

राष्ट्रीय सम्मेलन में मेघालय के मुख्यमंत्री, भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार, देश भर के वैज्ञानिक और खासी के लिविंग रूट ब्रिज (जिंगकींग जेरी) सहकारी समितियों के सदस्य शामिल हुए। मुख्यमंत्री कोनराड के. संगमा ने अपने संबोधन में कहा कि मेघालय की जिंगकिएंग जरी न केवल वैश्विक दर्शकों के लिए प्रकृति और मानव संस्कृति के बीच सहजीवी संबंधों को उजागर करती है, बल्कि इससे भी अधिक, यह अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी के बीच एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर राज्य सरकार कुछ सालों से अथक काम कर रही है।

एक सप्ताह के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि इन अद्वितीय जीवित जड़ सेतु संरचनाओं के संरक्षण उपायों को मजबूत करने के लिए तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता हैं। ये इस बात का उदाहरण हैं कि स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करके समस्याओं का समाधान खोजने के लिए स्वदेशी ज्ञान प्रणाली कैसे विकसित होती है। ये कोई नहीं जानता है और ना ही कोई लिखित दस्तावेज है कि कब और किसने इस बायो-इंजीनियरिंग की शुरुआत की होगी। यह अमूर्त कौशल ज्ञान परिवारों के भीतर पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता चला आ रहा है। वैज्ञानिकों ने एकमत स्वर में कहा कि जीवित जड़ पुल वनस्पतियों और जीवों की कई गंभीर रूप से लुप्तप्राय प्रजातियों का घर है और इसलिए निश्चित रूप से यूनेस्को की विश्व धरोहर स्थल में एक मजबूत उम्मीदवारी रखता है।

अंत में हम सब ने एक दूसरे को अलविदा कहा। हमलोग इस यात्रा की ये सुनहरी यादें हमेशा संजो कर रखेंगे। हम कामना करते हैं कि मेघालय सरकार को इन जीवित जड़ पुलों को प्रतिष्ठित यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल का दर्जा दिलाने में सफलता मिले। इस लेख में हमने पाठकों के लिए इन अद्भुत जीवित जड़ पुलों से संबंधित सभी पहलुओं को सम्मिलित करने की पूरी कोशिश की है।

लाइट सुथिम गांव से सुथिम गांव का दृश्य

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 41-42 (2021)

महात्मा गांधी के पर्यावरण सम्बन्धी विचार

ललिता यादव एवं भैरव यादव

विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एक समाज सुधारक, स्वतंत्रता सेनानी, साहित्यकार तथा पत्रकार ही नहीं अपितु पर्यावरणविद् भी दिए थे। गांधी जी ने अपने लेखों, विचारों,भाषण तथा जीवन शैली के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का पूरे विश्व को संदेश दिया। आज पूरे विश्व के समक्ष पर्यावरण संरक्षण की समस्या बढ़ती जा रही है । विभिन्न प्रकार के राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय संस्थान इस समस्या के निराकरण में लगे हुए हैं | पर्यावरण संरक्षण के उदाहरण के संदर्भ में गांधी जी ने प्रकृति को याद दिलाते हुए कहा था कि "प्रकृति हर मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम है किंतु किसी भी मनुष्य के लोभ को पूरा करने में सक्षम नहीं है।

पर्यावरण संरक्षण के संबंध में हम कह सकते हैं कि गांधी जी का जीवन ही उनका संदेश था | उन्होंने अपने जीवन में नैसर्गिक सिद्धांतों को अपनाया तथा प्रकृति के प्रतिकूल किसी भी अवधारणाओं को अनुचित ठहराया | यहां तक कि गांधी जी ने प्राकृतिक उपचार को ही शारीरिक रोगों से मुक्ति पाने का सर्वोत्तम उपाय बताया।

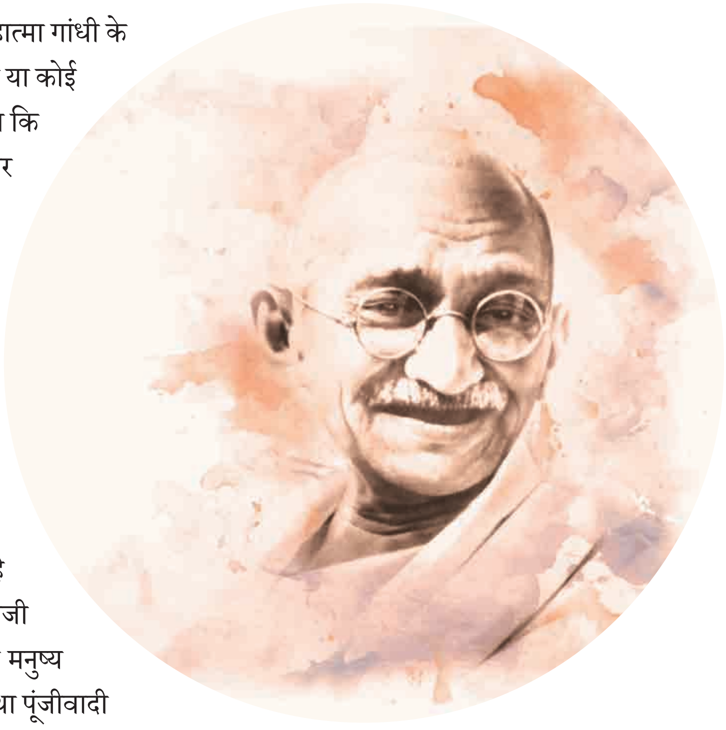

गांधी जी स्वयं को व्यावहारिक आदर्शवादी कहते थे।अर्थात व्यक्ति का विचार एवं आदर्श व्यक्ति के व्यवहार में झलक ना चाहिए।महात्मा गांधी के आदर्श वादी विचार चाहे वह राजनीतिक हो या सामाजिक हो या कोई अन्य गतिविधि हो सभी में शामिल है | गांधीजी का मानना था कि जब समाज और राजनीति में किया जाने वाला कार्य सत्य और अहिंसा पर आधारित होना चाहिए तो सत्य और अहिंसा कि उनकी यह अवधारणा सीधे-सीधे पर्यावरण चिंतन से जुड़ती है। हालांकि उन्होंने पर्यावरण शब्द के स्थान पर प्रकृति शब्द का प्रयोग किया है और इस प्रकार गांधी जी सत्य और अहिंसा को व्यक्ति का मूलभूत गुण मानते थे और जब हम मनुष्य की प्रकृति में सत्य और अहिंसा को मूलभूत मानते हैं तो जो समग्र प्रकृति है उनके प्रति भी हमारा व्यवहार सत्य और अहिंसा का होना चाहिए। महात्मा गांधी ने जो पर्यावरण चिंतन संबंधी तथ्य हमारे सामने रखा है वह यूरोप की औद्योगिक क्रांति के विरोध में की गई है गांधीजी का मानना था कि इस औद्योगिक सभ्यता के पूर्व पूरे विश्व में मनुष्य एवं प्रकृति के बीच में एक सामंजस्य एवं साम्राज्य का रिश्ता था पूंजीवादी औद्योगिक सभ्यता ने इसे प्रतिस्पर्धा के रिश्ते में बदल दिया | मनुष्य प्रकृति के साथ हिंसा करने लगा और बदले में प्रकृति मनुष्य के साथ हिंसा करने लगीऔर इस दुष्चक्र में मनुष्य अभी तक फंसा हुआ है यही दरअसल पर्यावरण का मूल संकट है और इस पर्यावरण संकट के अस्थाई समाधान के लिए मनुष्य और प्रकृति के बीच में सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है।

"मेरा जीवन ही मेरा संदेश है" के द्वारा वास्तव में गांधी जी संयम व प्रकृति के भेद को ही प्रतिष्ठित करने का प्रयास करते थे | गांधी जी ने प्राणी मात्र के प्रति समभाव का निरूपण करते हुए सरलता तथा इंद्रिय संयम को महत्वपूर्ण माना था।

गांधी जी ने एक बार कहा था कि एक समय आएगा जब लोग अपनी जरूरतों को कई गुना बढ़ाने की दौड़ में लगे होने के कारण कई

प्राकृतिक चीजों को नष्ट करेंगे और बाद में अपनी इसी कार्य के लिए पछताएंगे और कहेंगे कि यह हमने क्या किया? यदि हम जलवायु परिवर्तन संबंधी वर्तमान स्थिति को देखें तो जिस व्याख्याता से विकसित देश को भरते हुए विकासशील देशों को अपना कार्बन उत्सर्जन कम करने के लिए समझा रहे हैं और विकसित देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन की गति को कम करने के लिए अरबों डॉलर खर्च किए जा रहे हैं उससे गांधी की भविष्यवाणी सच होती दिख रही है यद्यपि 70 के दशक में "स्मॉल इज ब्यूटीफुल" और "लिमिट्स टू ग्रोथ" जैसी किताबों के माध्यम से हमें पर्यावरणीय संकट के बारे में जागरूक किया जा चुका था तथापि पूरी दुनिया को इस गंभीरता को समझने में 1 दशक से अधिक का समय लग गया। गांधी जी को पूर्ण विश्वास था कि पारिस्थितिकी आंदोलन को अहिंसात्मक होना चाहिए इसलिए उन्होंने कहा था "हम तब तक प्रकृति के विरुद्ध हिंसा को रोकने वाला पारिस्थितिकी आंदोलन नहीं बना सकते जब तक अहिंसा का सिद्धांत मानव संस्कृति की नीति का केंद्र नहीं बनता |"

वायु प्रदूषण पर टिप्पणी करते हुए गांधी जी ने कहा था कि उचित उपचार के उपायों के माध्यम से वायु प्रदूषण को रोकना स्थिरता व टिकाऊ विकास का आवश्यक पहलू है।जब 1913 में गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में अपने पहले सत्याग्रह आंदोलन की अगुवाई कर रहे थे तभी उन्होंने यह महसूस कर लिया था कि आधुनिक समाज तक स्वच्छ हवा पहुंचाने में लागत लगेगी उन्होंने अपने "क्लिक टू हेल्थ" में भी कहा था कि वायु हमारे प्राणों के लिए अत्यंत आवश्यक है और इसे स्वच्छ होना उससे भी ज्यादा आवश्यक है | उनका कहना था कि प्रकृति ने हमें हमारी जरूरतों के हिसाब से मुफ्त में हवा दी है परंतु आधुनिक मानव ने इसकी एक मूल्य रख दिया है | 1930 के दशक के अंतिम दिनों में उन्होंने लोकतंत्र को परिभाषित करते हुए कहा था कि सभी नागरिकों को शुद्ध हवा व शुद्ध पानी उपलब्ध होना चाहिए | आज से लगभग 100 वर्ष पहले शुद्ध हवा शुद्ध पानी शुद्ध 21वीं सदी में सार्थक है या हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। महात्मा गांधी ने यह भी कहा था कि यदि मनुष्य पैदल चलता है तो ना केवल मनुष्य बल्कि प्रकृति भी स्वस्थ रहेगी और इसी को चरितार्थ करने हेतु में मुंबई स्थित अपने कार्यालय पैदल ही जाया करते थे।

आज राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में पर्यावरण विमर्श द्वारा समस्या समाधान के लिए याचिका सक्रियता तेजी ला रही है वर्तमान स्थिति को देखते हुए पारिवारिक एवं श्रम न्यायालयों की तर्ज पर जल्द ही परिवार न्यायालय स्थापित कर न्यायिक सक्रियता व पर्यावरण विमर्श के माध्यम से पर्यावरण नैतिकता कायम करने की अति शीघ्र जरूरत है।

गांधीजी का पर्यावरण के प्रति जो दर्शन रहा है उनके चिंतन एवं प्रयोगों में बहुधा दिखता रहा है | खाद्य स्वदेशी,शरीर श्रम, लघु एवं कुटीर उद्योग,ग्रामीण अर्थव्यवस्था, कृषि प्रधान जीवन,गौ संरक्षण बुनियादी तालीम आदि मौलिक चिंतन ने विभिन्न प्रकार से ना केवल तत्कालीन मानव समाज एवं पर्यावरण को शुद्ध रखने का प्रयास किया है बल्कि अभी भी वर्तमान समस्याओं के संदर्भ में मार्गदर्शन करने की क्षमता बनाए रखा है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि गांधी का पर्यावरण शास्त्र भारत और विश्व के लिए उनके इस समग्र दृष्टिकोण के अनुरूप है कि मनुष्य का अस्तित्व बने रहने के लिए जो अत्यंत आवश्यक है वही प्रकृति से मांगा जाए | पर्यावरण के संबंध में उनके विचार राज्यव्यवस्था, अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्य और विकास से संबंधित उनके सभी विचारों से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं | उनके वैराग्य और सादा जीवन ग्रामीण स्वायत्तता और स्वालंबन पर आधारित ग्राम केंद्रित सभ्यता हस्तशिल्प और कला केंद्रित शिक्षा मानव श्रम पर जोर और शोषक संबंधों को हटाने में पारिस्थितिकी दृष्टिकोण का तत्व शामिल है।

वनस्पति विज्ञान एवं अध्यात्म

सौरभ सचान

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्रीय केन्द्र, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

वनस्पति विज्ञान का अध्ययन प्रकृति के अन्तर्गत किया जाता है। वेदों में प्रकृति के दो भेद वर्णित हैं। पहली 'अपरा प्रकृति' अर्थात विनाशी प्रकृति एवं दूसरी 'परा प्रकृति' अर्थात अविनाशी प्रकृति। ग्रन्थों के अनुसार अपरा प्रकृति पंचतत्वों की बनी होती है, वे तत्व हैं:- क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर।

"क्षिति जल पावक गगन समीरा पंच रचित यह अधम शरीरा" (मानस)

मनुष्य का शरीर अथवा वृक्ष का शरीर इन्हीं पंचतत्वों से मिलकर ही इसकी संरचना होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि यह पंचतत्व हमारे शरीर में कहाँ स्थित हैं ?

वेदों के अनुसार - 'यत्कठिनं सा पृथ्वी' अर्थात हमारे शरीर में जो कठोर भाग है, हड्डी इत्यादि यह पृथ्वी तत्व को प्रदर्शित करते हैं। इसी प्रकार 'यत्द्रवं तद्‌ापो' अर्थात जो शरीर में द्रव्य भाग है जैसे- रक्त, वीर्य, स्वेद, मूत्र एवं श्लेष्म आदि वे जल तत्व को प्रदर्शित करते हैं। 'यतउष्णं तत्तेजो' अर्थात शरीर में जो उष्मा है वह अग्नि तत्व को प्रदर्शित करती है। इसी प्रकार 'यत सुषिरं तदाकाशं' अर्थात शरीर में जो खोखला भाग है जैसे- अमाशय, गर्भाशय तथा रक्तवाहिकाओं के भीतरी खोखले भाग। ये सभी आकाश तत्व को प्रदर्शित करते हैं तथा 'यत संचरित स वायुः' अर्थात जो शरीर में संचरित होता है वह वायु तत्व है।

पुनः प्रश्न उठता है कि वनस्पतियों में यह पाँचों तत्व कहाँ स्थित हैं ? - वृक्षों का जो कठोर भाग है उदाहरणार्थ - जाईलम, काष्ठ एवं कार्क आदि ये पृथ्वी तत्व को प्रदर्शित करते हैं। जाइलम वेसेल्स व ट्रैकीड्स के अन्दर का जो खोखला भाग है, वह आकाश तत्व को प्रदर्शित करता है। प्रकाश संश्लेषण द्वारा सूर्य की ऊर्जा को अर्थात सोलर एनर्जी को रसायनिक ऊर्जा में बदल कर कार्बोहाइड्रेट्स के रूप में संचित ऊर्जा ही अग्नि तत्व को प्रदर्शित करती है अर्थात काष्ठ में अग्नि निराकार रूप में स्थित रहती है, जब वह साकार रूप में प्रकट होती है तब लपटों के रूप में दिखाई देती है।

"एक दारूगत देखिए एकू पावक युग सम ब्रह्म विवेकू" (मानस)

अर्थात जैसे ब्रह्म के साकार एवं निराकार दो रूप होते हैं, वैसे ही अग्नि भी साकार एवं निराकार दो रूपों में होती है। वृक्षों में फ्लोएम में प्रवाहित रस ही जल तत्व को प्रदर्शित करता है तथा वात्रंध्रों के द्वारा पत्तियों में प्रविष्ट एवं निर्गत होने वाली ऑक्सीजन, कार्बन-डाय-ऑक्साइड एवं जलवाष्प ही वायु तत्व को प्रदर्शित करती है।

श्रीमदभागवत् गीता में अपराप्रकृति अथवा विनाशी प्रकृति को भौतिक (स्थूल) प्रकृति तथा पराप्रकृति अर्थात अविनाशी प्रकृति को चेतन प्रकृति कहा गया है। गीता में अपराप्रकृति को क्षेत्र तथा पराप्रकृति को क्षेत्रज्ञ भी कहा गया है। यह दृश्य शरीर क्षेत्र है एवं अदृश्य आत्मा क्षेत्रज्ञ है, यही चेतन तत्व है। प्रत्येक जीव का शरीर चाहे मनुष्य हो अथवा वृक्ष सदैव अपरा एवं परा प्रकृति अर्थात क्षेत्र एवं क्षेत्रज्ञ के संयोग से ही बनता है।

यावत संजायते किंचित सत्वम् स्थावर जंगमम्।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ संयोगात तत् विद्धि भरतर्षभ।। (गीता)

अतः अब यह स्पष्ट है कि मनुष्य का शरीर 'क्षेत्र' है एवं आत्मा ही 'क्षेत्रज्ञ' है। इसी प्रकार वृक्षों का शरीर तो 'क्षेत्र' है परन्तु वृक्षों का प्रवाहित होने वाला रस है, वही चेतन तत्व है। इसी के कारण वृक्षों में चेतना होती है। प्रसिद्ध भारतीय वनस्पति वैज्ञानिक डा0 जगदीश चन्द्र बसु ने वृक्षों में चेतन तत्व की खोज की थी, इसके लिए उन्हें पुरस्कृत किया भी किया गया था। वेदों में चेतन तत्व को ही 'रस' शब्द से परिभाषित

किया गया है यथा- 'रसों वै सः' जो कार्य मनुष्य के शरीर में आत्मा करती है वही कार्य वृक्षों के शरीर में प्रवाहित रस करता है। आत्मा आनन्द स्वरूप है, उसी प्रकार वृक्षों में रस आनन्दस्वरूप है। शरीर से आत्मा निकल जाती है तब आनन्द समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार जब वृक्षों के शरीर से रस सूख जाता है तब वृक्ष की समस्त आनन्ददायी क्रियायें जैसे- पुष्पित तथा पल्लवित होना आदि समाप्त हो जाती हैं।

भगवान कृष्ण ने गीता में अपने को समस्त प्राणियों का सनातन बीज कहा है यथा-

''बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनं'' (गीता)

उन्होंने अपने को अपव्यय बीज भी कहा है - 'बीजं अव्ययं' वृक्षों में भी बीज होते हैं, परन्तु वे बीज सनातन तथा अव्ययं बीज नहीं होते हैं अर्थात- वे ऐसे बीज होते हैं जो अंकुरित होने पर नष्ट हो जाते हैं। अंकुरण के समय बीज नष्ट हो जाता है एवम् नया पौधा बन जाता है परन्तु भगवान कृष्ण ऐसे सनातन एवं अव्ययं बीज हैं कि जिनसे समस्त सृष्टि उत्पन्न हो जाती है, पर वे स्वयं नष्ट नहीं होते अर्थात पौधों के बीज विनाशी हैं परन्तु समस्त सृष्टि का जो बीज है वह अविनाशी है, अव्यय है, वही कृष्ण हैं, वही परमात्मा हैं।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 45-47 (2021)

मध्यप्रदेश का रहस्यमय नरो पहाड़ के उष्णकटिबंधीय शुष्क वनों का पुनरुत्पादन व पुनर्वन्यकरण

दीप नारायण पाण्डेय[1], अच्युता नन्द शुक्ला[2] एवं अर्जुन प्रसाद तिवारी[3]

[1]प्रधान मुख्य वन संरक्षक, वन विभाग, राजस्थान
[2]भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता
[3] क्षेत्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय, मैसूर

मध्यप्रदेश में सतना जिले का नरो पहाड़ एक अद्भुत सुंदर और मनोहारी वन क्षेत्र है जो उष्णकटिबंधीय शुष्क वनों के लिए प्रसिद्ध है। इस प्रकार के वन विश्व के सबसे संकटापन्न वन माने जाते हैं। दीर्घकालिक मानव-जनित दबाव के कारण बड़े वृक्ष और बड़े बीजों वाली प्रजातियों के वृक्ष लगभग समाप्त होने की दिशा में बढ़ रहे हैं। बार-बार कटान होने के कारण केवल वही प्रजातियां बची हुई हैं जिनमें फुटान होकर नये कल्ले विकसित हो सकते हैं। महुआ, तेंदू, कुसुम, कैंथ, चिरोंजी, बहेड़ा, हर्रा, आमला आदि के बड़े वृक्ष अब सिर्फ इक्का-दुक्का ही पाये जाते हैं। वनों में बीजों से पुनरुत्पादन लगभग नगण्य है क्योंकि बीजों का विकीर्णन करने वाले प्राणियों की प्रजातियाँ, संख्या और घनत्व बहुत कम हो गया है। फिर भी नरो पहाड़ में अभी भी इतनी हरियाली है कि यदि समय रहते यहां पर फॉरेस्ट रेस्टोरेशन और रिवाइल्डिंग के लिये निवेश किया जाये तो आने वाले दशकों में एक बार नरो पहाड़ के वनों के वृक्षों, झाड़ियों और पौधों प्रजाति विविधता और वन्यजीव-विविधता पुनः बेहतर हो सकती है।

अगर आपने मध्यप्रदेश में सतना जिले का यह रहस्यमय अद्भुत वन क्षेत्र नहीं देखा तो आपने मध्यप्रदेश को ठीक से नहीं देखा। यह सतना जिले का नरो पहाड़ है। नरो पहाड़ के एक तरफ टमस नदी बहती है। नरो पहाड़ और भरहुत के मध्य बहने वाली सदानीरा टमस नदी के बीचों-बीच स्थानीय जन समुदाय में अत्यंत लोकप्रिय स्थल बटइया बाबा का स्थान है। यह पहाड़ रहस्यों को समेटे हुये है क्योंकि यहां पर पुरा-पाषाणकाल, मध्य-पाषाणकाल, तथा नव-पाषाणकाल (पैलियोलिथिक, मीसोलिथिक, नियोलिथिक) आदि से संबंधित मानव सभ्यता के प्रमाण प्राप्त होते हैं। विशेष रूप से मध्य पाषाणकाल या मेसोलिथिक पीरियड के पुरातात्विक प्रमाण नरो पहाड़ और टमस नदी के तटवर्ती क्षेत्र में बहुतायत से मिलते हैं। मध्य पाषाण युग वस्तुतः पुरापाषाण युग के पश्चात का समय है जो 8000 ईसा-पूर्व से 4000 ईसा-पूर्व के मध्य का माना जाता है। यूरेशिया के विभिन्न हिस्सों में मीसोलिथिक पीरियड का अलग-अलग समय है। दक्षिण पश्चिम एशिया में यह काल लगभग 20000 से 8,000 वर्ष पूर्व माना जाता है। मध्य पाषाण काल की विशेषता पत्थर के बहुत छोटे औजार-फलक, उत्कीर्णक, चंद्राकार, त्रिभुजाकार, वेधनी आदि—जो नरो पहाड़ और समीपवर्ती टमस नदी में बहुतायत से पाये जाते हैं। दुर्भाग्य यह रहा कि नरो पहाड़ के पुरा-इतिहास पर कोई विशेष अध्ययन अभी तक नहीं हुआ है।

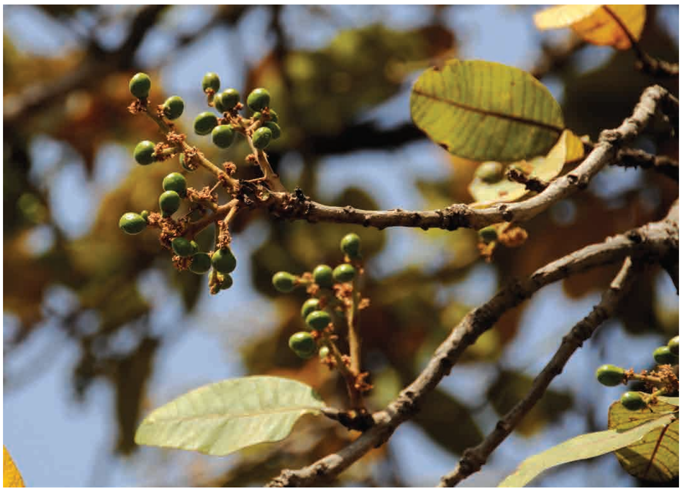

बुचननीया कोचिनचाइनंसिस

संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2021 से 2030 तक यूएन डिकेड ऑन इकोसिस्टम रेस्टोरेशन घोषित किया है। इस समय पूरी दुनिया में प्रकृति और मानव के रिश्तों को सुधारने के लिये पुनरुद्धार (रेस्टोरेशन) और पुनर्वन्यकरण (रीवाइल्डिंग) को बढ़ावा दिया जा रहा है। इस अवसर पर नरो पहाड़ में प्रमाण-आधारित पुनर्वन्यकरण क्रियान्वित किया जाना उपयोगी होगा।

रीवाइल्डिंग को सामाजिक-पारिस्थितिकीय प्रणालियों के लचीलेपन और जटिलता को साथ लेकर तीन महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं के रूप में समझना होगा। रीवाइल्डिंग में खाद्य-श्रंखला जटिलता (ट्रॉफिक कॉम्प्लेक्सिटी), प्राकृतिक विक्षोभ या गड़बड़ी (स्टोकैस्टिक या नेचुरल डिस्टर्बेंस), प्रजातियों की निर्बाध आवाजाही (डिसपर्सल), और इन तीनों में परस्पर

अंतःक्रियात्मक संबंधों की समग्रता को साथ लेकर पारिस्थितिकीय तंत्र के लचीलेपन में सुधार और जैव-विविधता संरक्षण को एक साथ क्रियान्वित किया जा सकता है। रीवाइल्डिंग को पारिस्थितिक तंत्र का पूर्णरूपेण और समग्र रेस्टोरेशन माना जा सकता है।

ट्रॉफिक रीवाइल्डिंग में जैव-विविधता की समग्रता और पारिस्थितिक तंत्र की सम्पूर्ण खाद्य-श्रंखला का रेस्टोरेशन किया जाता है। इसके लिये टॉप-डाउन ट्रॉफिक इंटरैक्शन और संबंधित ट्रॉफिक कैस्केड को बहाल करने के लिए प्रजातियों का रेस्टोरेशन और आवश्यकतानुसार रिइंट्रोडक्शन, ट्रांसलोकेशन आदि भी किया जाता है। खाद्य श्रंखला के ऊपरी स्तरों पर बड़ी प्रजातियां प्रायः पारिस्थितिक तंत्र की क्रियात्मकता में अति-महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। ट्रॉफिक-कैस्केड में बड़े वन्य-प्राणियों के महत्व और वर्तमान में उनकी संख्या में हो रही कमी के कारण ट्रॉफिक-डाउनग्रेडिंग को देखते हुए प्रायः बड़े प्राणियों की बहाली के लिये प्रयास करना आवश्यक होता है। ट्रॉफिक-डाउनग्रेडिंग या ट्रॉफिक-डेप्लीशन मानव द्वारा अवैध शिकार या चराई कटाई आदि के कारण हो सकता है। इन दबावों को रोकना आवश्यक रहता है तभी ट्रॉफिक रीवाइल्डिंग संभव हो पाती है। धीरे धीरे हर ट्रॉफिक स्तर पर प्राकृतिक प्रजाति-विविधता बढ़ाना आवश्यक है।

नरो पहाड़ में पुराने वृक्षारोपण, नये वृक्षारोपण, फॉरेस्ट रेस्टोरेशन, रिवाइल्डिंग, ग्रासलैंड रेस्टोरेशन, वन, वन्यजीव एवं जैव-विविधता संरक्षण आदि से संबंधित समस्त कार्यों को बहु-उपयोगी बनाते हुये क्रियान्वयन उपयोगी रहेगा। एक मुख्य बात यह है कि क्रियान्वयन करते समय समग्रता का ध्यान रखा जाना अनिवार्य रहता है। समग्रता से तात्पर्य एक ओर यह है कि प्रत्येक कार्य में क्लाइमेट चेंज अडॉप्टेशन, जैव-विविधता संरक्षण, इकोलॉजिकल फंक्शन, स्थानीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य तथा स्थानीय जन समुदायों की आजीविका का सुदृढ़ीकरण जैसे सभी विषयों को एक साथ ध्यान में रखते हुये क्रियान्वयन हो। दूसरी ओर समग्रता से तात्पर्य यह है कि क्षेत्र के संरक्षण हेतु कार्य, रोपण हेतु बहु-उपयोगी और पारिस्थितिकीय रूप से महत्वपूर्ण सभी प्रजातियों का चयन, वृक्षारोपण में बड़ी संख्या में स्थानीय प्रजातियों के बीजों की सीधी बुवाई, स्थानीय प्रजातियों के सीडलिंग्स का रोपण, स्टेक प्लांटिंग या डंडारोपण, प्राकृतिक पुनरुत्पादन को बढ़ावा देना, जल एवं मृदा संरक्षण आदि का प्रत्येक क्षेत्र में एक साथ क्रियान्वयन शामिल है। समग्रता से तीसरा तात्पर्य यह है कि जहां कार्य संपादन किया जा रहा है वहां बड़े बीजों वाले वृक्षों की सीधी बुवाई और रोपण दोनों ही पूरी विविधता को साथ लेकर किया जाना उपयोगी रहेगा। इनके बीजों का एकत्रीकरण, पौधशालाओं में रोपण हेतु बड़े और पुष्ट पौधे तैयार करना, बीजारोपण के लिये बीजों की व्यवस्था तथा भंडारण, समुचित समय में प्रजाति विविधता को साथ लेते हुए बीजारोपण भी शामिल है। बड़े बीजों और फलों वाली प्रजातियों में आम, महुआ, जामुन, अर्जुन, बहेड़ा, साजा, सेहेरुआ, कंजी, घटबेर, लिसोड़ा, बीजासाल, पलाश, कुल्लू, सीताफल, बेल, नीम, कचनार, तेंदू, गुर्जा, इमली, सागवान, बेर, कुसुम, कैंथ, चिरोंजी, हर्रा, आमला आदि शामिल हैं। इन सबको बुवाई तथा रोपण में उपयोग किया जा सकता है, इनके अलावा भी नरो पहाड़ में पायी जाने वाली अन्य प्रजातियों को भी बुवाई, रोपण और डंडारोपण में शामिल करना उपयोगी रहेगा। समग्रता से चौथा तात्पर्य यह है कि स्थानीय स्तर पर लोगों द्वारा क्षेत्र के संरक्षण के लिए अपने स्थानीय नियम बनाना, स्थानीय रूप से मानिटरिंग करना तथा स्थानीय रूप से एनफोर्समेंट करना शामिल है। वनों की आग, चराई, कटान, अतिक्रमण, अवैध खनन जैसी समस्याओं से रोकथाम भी समग्र क्रियान्वयन में ही शामिल है।

नरो पहाड़ में बड़े कशेरुकी जीव अपने शरीर के आकार, लंबे प्रजनन चक्रों और उच्च चयापचय जरूरतों के कारण इंसानी दखलंदाजी से बहुत दुष्प्रभावित हुये हैं। मानव-जनित आवास-विनाश व शिकार के कारण शीर्ष-मांसाहारी जीव व बड़े शाकाहारी प्राणियों की संख्या में आयी कमी से ट्रॉफिक कैस्केडिंग प्रभाव और पारिस्थितिक तंत्र का पतन हो रहा है। इसलिये रीवाइल्डिंग में विभिन्न उपायों से नरो पहाड़ के वनों में ट्राफिक जटिलता को बढ़ाना अपरिहार्य है। इनमें मानव-जनित अवैध गतिविधियों, शिकार व अतिक्रमण की रोकथाम भी शामिल हैं। यहाँ अब प्राकृतिक स्रोतों से प्राणियों का प्रसार और बीजों का विकीर्णन प्रायः नहीं हो पा रहा है। इसलिये स्थानीय रूप से विलुप्त हो गये वन्यप्राणियों की प्रजातियों के रिइंट्रोडक्शन या ट्रांसलोकेशन के द्वारा भी ट्राफिक जटिलता की बहाली की जा सकती है। हालांकि, इन सभी प्रयत्नों में तमाम अनिश्चिततायें और पारिस्थितिक जोखिम हो सकते हैं और बड़ी सावधानीपूर्वक प्रमाण-आधारित क्रियान्वयन करना पड़ता है। उदाहरण के लिये, लोगों और वन्यजीवों के बीच सह-अस्तित्व को बढ़ावा देने के लिये फसल, पशुधन या मानव क्षति के लिये मुआवजा आदि देखर जोखिम को कुछ कम किया जा सकता है।

एक बात यह भी है कि ट्रॉफिक रीवाइल्डिंग करते समय बड़े आकार और आसानी से दिखाई पड़ने वाले प्राणियों और वृक्षों के साथ साथ कवक, शैवाल, शाकीय पौधों, झाड़ियों, घास, अकशेरुकी जीवों और जीवाणुओं को पर भी ध्यान देना उपयोगी रहेगा। अकशेरुकी जीव और जीवाणु भी जैव-विविधता का विशाल हिस्सा बनाते हैं और कई प्रमुख पारिस्थितिक तंत्र प्रक्रियाओं को चलाते हैं। इस विविधता का पुनर्स्थापन भी ट्रॉफिक रीवाइल्डिंग का महत्वपूर्ण कार्य है। जैव विविधता संरक्षण में पारिस्थितिकीय तंत्र की संरचनात्मक और क्रियात्मक

जटिलता को संरक्षित और पुनर्स्थापित करना ट्रॉफिक रीवाइल्डिंग का आवश्यक घटक है।

नरो पहाड़ में मानव-जनित दबाव के साथ ही प्राकृतिक विक्षोभ या नेचुरल डिस्टर्बेंस भी विविध स्थानों, परिमाणों और आवृत्तियों पर स्टोकेस्टिक,गड्डमड्ड या यादृच्छिक तरीके से घटित होते हैं। कम तीव्रता में ये विक्षोभ पारिस्थितिकीय तंत्र के पुनर्गठन और जटिलता बढ़ाने में मददगार होते हैं, लेकिन लगातार साल-दर-साल विक्षोभ के बावजूद भी ऐसी प्रजातियां जो विक्षोभ से बचने में सक्षम हैं, वे जैविक विरासत के रूप में आज भी नरो पहाड़ पर विद्यमान हैं व प्राकृतिक पुनरुत्पादन में सहायक रहेंगीं। हाल में हुई शोध इस बात को संदेह से परे सिद्ध करती है कि बड़े जीवों (मेगाफॉना) की पारिस्थिक तंत्र में उपस्थिति अन्य प्रजातियों की आनुवंशिक-विविधता और पारिस्थितिक-लचीलापन को बढ़ावा दे सकती है।

प्रजातियों की आवाजाही भी संभालना आवश्यक है ताकि आसपास के क्षेत्रों से प्रजातियों के आदान-प्रदान से जीन प्रवाह में वृद्धि, इनब्रीडिंग में कमी, और बेहतर जीवनीशक्ति वाले वन्य-प्राणी बढ़ सकें। पर्यावास-क्षरण या मानवजनित अवरोध प्रजातियों की आवाजाही-क्षमता को कम करते हैं अतः गलियारों या कोरिडोर्स की व्यवस्था, विकास और प्रबंध रीवाइल्डिंग का आवश्यक अंग रहेगा। प्राणियों के एक संरक्षण क्षेत्र से दूसरे संरक्षण क्षेत्र में प्राणियों की आवाजाही को बढ़ावा देने के लिए पारिस्थितिक तंत्र के भीतर और बीच में कनेक्टिविटी में सुधार करना आवश्यक है।

चूंकि उपरोक्त तीनों पारिस्थितिक प्रक्रियायें और उनसे संबंधित क्रियान्वयन एक दूसरे को प्रभावित कर सकते हैं अतः एकीकृत रणनीति अपनाते हुये आगे बढ़ना होगा। उदाहरण के लिये, प्राकृतिक विक्षोभ आवास-विविधता को बढ़ावा दे सकते हैं और कम प्रतिस्पर्धी प्रजातियों के लिये संसाधन उपलब्धता में वृद्धि कर सकते हैं और परिणामस्वरूप प्रजातियों की विविधता में वृद्धि हो सकती है। आवासों के बीच अच्छा गलियारा हो तो प्राणियों की बढ़ी हुई आबादी आसपास के पारिस्थिक तंत्र में निर्बाध आवाजाही कर सकती सकता है। जटिल पारिस्थितिक तंत्र में मौजूद बड़े कशेरुकी प्राणी प्रायः पौधों के बीजों के विकीर्णन में मदद करते हैं और शिकार या चराई के माध्यम से विक्षोभ बढ़ा सकते हैं। इसलिए, इन तीनों प्रक्रियाओं की साथ-साथ बहाली प्रक्रियाओं की परस्पर कार्यक्षमता के स्तर को सकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है। प्रक्रियाओं के बीच अंतर्क्रियात्मकता मिल-जुलकर पारिस्थितिकीय तंत्र के लचीलेपन को बढ़ाने में मदद कर सकती है।

डायोस्पाइरस मेलांनोज़ाइलोन

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 48-51 (2021)

भारत में खाद्य अपमिश्रण

नितिषा श्रीवास्तव एवं शिंजिनी मुखर्जी

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्रीय केन्द्र, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

भारत एक तेजी से उभरती हुई अर्थव्यवस्था वाला देश है। यहाँ विकास के हर क्षेत्र में नये–नये प्रतिमान स्थापित हो रहे हैं। आज भारत के कई उद्योगपति विश्व की धनवानों की सूची में चौथे और पाँचवें स्थान पर अंकित किये जा रहे हैं। भारतीय मूल के कई उद्योगपतियों ने विश्व व्यवसाय जगत् में अपना उच्चतम नाम अंकित करवाया है। भारत दुनिया का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश है। यहां दुनिया की आबादी का लगभग पांचवां हिस्सा निवास करता है। इतनी बड़ी आबादी का पेट भरने के लिए और अनैतिक आर्थिक लाभ पाने के लिए खाद्य विक्रेता और उत्पादक अक्सर खाद्य पदार्थों में मिलावट का कार्य करने में तनिक भी संकोच नहीं करते हैं। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में यह निगरानी करना लगभग असंभव है कि उपभोक्ता तक क्या पहुंचाया जा रहा है।

हम हमारी दैनिक उपयोग वाली लगभग सभी चीजों में मिलावट देखते है। अक्सर यह देखा गया है कि हमारा दैनिक भोजन या तो मिलावटी होता है या अवांछित सामग्री से दूषित होता है। आज कल तो मिलावटी दूध का व्यापार एक फलता-फूलता व्यवसाय बन गया है। जिसमे विभिन्न प्रकार के सिंथेटिक रसायनों और डिटर्जेंट का प्रयोग होता है। मई 2000 में, दिल्ली पुलिस ने प्रतिष्ठित राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (एनडीडीबी) द्वारा संचालित मदर डेयरी के समान पाउच में पैक किए गए 76000 लीटर सिंथेटिक दूध को जब्त किया था। भारत में कई जगहों पर दूध से वसा को हटाकर पतले तरल को सफेद और गाढ़ा करने के लिए हानिकारक रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है। हमारी दैनिक जीवन में प्रयोग में आने वाली विभिन्न सामाग्री जैसे, दूध, तेल, दाल, मसाले, सब्जियां सभी मिलावट का शिकार हो चुकी हैं।

सरसों का तेल भारतीय घरों में खाना पकाने के मुख्य तेलों में से एक है, लेकिन इसमें अक्सर आर्जिमोन तेल की मिलावट की जाती है जो की स्वास्थ्य पर बहुत ही बुरा प्रभाव डालता है। 1877 से अब तक मिलावटी तेल के सेवन से या शरीर की मालिश करने से होने वाली महामारी ड्रॉप्सी के कारण काफी संख्या में भारतीयों की मृत्यु हो गई या वे अपंग हो गए। इसके परिणामस्वरूप सितंबर 1998 में कनाडा सरकार ने अपने नागरिकों को भारत से आयातित तेल में पका किसी भी प्रकार का खाद्य उत्पाद का सेवन नहीं करने की चेतावनी दी थी। हमारे यहाँ के बाज़ारों में हम अक्सर ही आकर्षक रूप से सजाए गए खाद्य पदार्थ पा सकते हैं जिनमें 'मेटानिल येलो', एक गैर-अनुमति प्राप्त कोयला टार डाई, जिसे आमतौर पर 'किशोरी रंग', 'रोडामिन-बी', 'लीड क्रोमेट' या 'अल्ट्रा' के रूप में जाना जाता है, के साथ मिलावट किया जा सकता है। ये सभी रंगा पदार्थ प्रतिबंधित और अत्यधिक कार्सिनोजेनिक हैं, अथार्त इनके सेवन से कैंसर जैसी घातक बीमारी का खतरा बना रहता है। इन सबका प्रमुख कारण लोगों में इनके विषय में जानकारी एवं जगरुकता की कमी है।

खाद्य अपमिश्रण रासायनिक, अवांछित सामग्री, सस्ती एवं घटिया सामग्री आदि के आकस्मिक या जानबूझकर मिलवाट द्वारा गुणवत्ता को कम करने के लिए किया जाता है। खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 के अनुसार किसी खाद्य वस्तु को मिलावटी तब माना जाता है, यदि किसी विक्रेता द्वारा बेची गई वस्तु की गुणवत्ता प्राकृतिक नहीं है या वह नही है जो क्रेता के द्वारा मांगी गई है; उस वस्तु में कोई ऐसा पदार्थ मिला हो जो इसकी गुणवत्ता को प्रभावित या हानिकारक रूप से प्रभावित करता है; उस वस्तु में किसी भी घटिया या सस्ते पदार्थ को वस्तु के स्थान पर पूर्ण या आंशिक रूप से प्रतिस्थापित किया गया हो, या वस्तु के किसी भी घटक को पूर्ण या आंशिक रूप से अलग कर दिया गया हो जिससे इसकी गुणवत्ता पूर्ण या आंशिक रूप से प्रभावित हो; तैयार किये गये पदार्थ या पैक किये गये पदार्थ जिसको अस्वच्छ परिस्थितियों में रखा गया था जिससे यह दूषित या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो गया है; वस्तु में पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से कोई गंदा, सड़ा हुआ या रोगग्रस्त पशु या वनस्पति पदार्थ या कीड़ों से पीड़ित, पदार्थ मिला हो जो की मानव उपभोग के लिए अनुपयुक्त है; वस्तु एक रोगग्रस्त जानवर से प्राप्त किया गया हो; वस्तु में कोई जहरीला या अन्य घटक उपस्थित हो जो की स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो;

वस्तु का कंटेनर किसी भी जहरीले या हानिकारक पदार्थ से बना हो, जो इसकी सामग्री को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बनाता हो; वस्तु में कोई निषिद्ध रंग पदार्थ या परिरक्षक, या कोई अनुमत रंग पदार्थ या परिरक्षक निर्धारित सीमा से अधिक हो; वस्तु की गुणवत्ता या शुद्धता निर्धारित मानक से कम हो जाती है या इसके घटक अन्य मानकों के अनुपात में मौजूद होते हैं, या इसके घटक निर्धारित अनुपात के अलावा अन्य अनुपात में मौजूद होते हैं, चाहे वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो या न हो।

खाद्य अपमिश्रण मूल रूप से तीन प्रकार के होते हैं,

पहला: जिसमे जानबूझकर मिलावट की गयी हो,

दूसरा: धातु संदूषण

तीसरा: आकस्मिक मिलावट

1. ऐच्छिक मिलावट: ये मिलावट एक ऐसी मिलावट है जिसमें खाद्य पदार्थ को जानबूझकर उन घटिया पदार्थों के साथ मिला दिया जाता है जिनमें उन खाद्य पदार्थों के समान गुण होते हैं जिनमें उन्हें मिलाया जाता है। इस प्रकार, उन मिलावटी पदार्थों का पता लगाना बहुत मुश्किल हो जाता है। इनमे रेत, संगमरमर के चिप्स, पत्थर, मिट्टी, चाक पाउडर, ईंट पाउडर, स्टार्च, आटा, गन्ना चीनी, वनस्पति तेल, पानी, मलाई निकाला हुआ दूध, गुड़, चिकोरी, भुना हुआ जौ पाउडर, पिसे हुए पपीते के बीज और रसायन हैं। रासायन जैसे मेलामाइन, यूरिया, खनिज तेल, कोल टार डाई आदि प्रमुख है। यह मिलावट का सबसे खतरनाक रूप है क्योंकि इसमें पोषक तत्वों की मात्रा में कटौती की जाती है और खाद्य पदार्थों में बाहरी पदार्थ मिलाए जाते हैं जो मानव स्वास्थ्य को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं।

2. धातु संदूषण: धात्विक संदूषण में कीटनाशकों से आर्सेनिक, पानी से लेड, और रासायनिक उद्योगों के अपशिष्टों से पारा, डिब्बे से टिन आदि शामिल हैं।

3. आकस्मिक मिलावट: आकस्मिक मिलावट खाद्य उत्पादों और पेय पदार्थों के उत्पादन के समय से लेकर उपभोग के समय तक उचित स्वास्थ्यकर स्थितियों की कमी के कारण होती है। आकस्मिक मिलावट कीटनाशक अवशेष, कैन से टिन, कृन्तकों की बूंदें, खाद्य पदार्थों में लार्वा से भी हो सकती है। इसमें आर्सेनिक, लेड, मरकरी के साथ धात्विक संदूषण भी हो सकता है। यह भी हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। उचित सावधानी बरतकर इस तरह की मिलावटों से बचा जा सकता है।

सारणी 1: विभिन्न खाद्य वस्तुओं में कुछ सामान्य खाद्य अपमिश्रण।

क्रम संख्या	पदार्थ	अपमिश्रण	हानिकारक प्रभाव
1.	दूध	पानी, कैल्शियम हाइड्रॉक्साइड, सोडियम बाइकार्बोनेट/ कार्बोनेट, सोडियम पाइरोफॉस्फेट, यूरिया, वनस्पति, स्टार्च, डिटर्जेंट, इनवर्ट शुगर / ग्लूकोज, सिंथेटिक दूध, अमोनियम सल्फेट, हाइड्रोजन पेरोक्साइड, बोरिक एसिड, सोडियम क्लोराइड मेलामाइन (राल)।	गुर्दे की पथरी और गुर्दे की विफलता (दूध में मेलामाइन), बच्चों में अपच, कैंसर या तीव्र गुर्दे की विफलता
	खोआ, चना, आइसक्रीम	वनस्पति/मार्जरीन स्टार्च, घटिया वसा, गैर-अनुमत रंग, ब्लॉटिंग पेपर	विषैला
3.	मक्खन	मैश किए हुए आलू, अन्य स्टार्च, केला, वनस्पति/ ओलियोमार्जरीन / लार्ड	गुणवत्ता में कमी/ आर्थिक नुकसान
4.	घी	वनस्पति तेल, सस्ता पशु वसा, ओलियोमार्जरीन	आर्थिक नुकसान, कर्क या गुर्दे जवाब दे जाना
5.	संघनित दूध	पनीर, खोया	आर्थिक नुकसान
6.	आइसक्रीम	स्टार्च, चावल का पाउडर या गेहूं का आटा	आर्थिक नुकसान
7.	खाद्य तेल (वनस्पति तेल)	सरसों के तेल में सस्ता तेल, अलसी, पपीता के बीज, घी के साथ नारियल का तेल, आर्गेमोन मेक्सिकाना तेल, सफेद खनिज तेल, निषिद्ध रंग, अरंडी का तेल, खनिज तेल, करंजा तेल, नीम का तेल, बासी तेल	पर्विल, महामारी, ड्रॉप्सी, हेपेटाइटिस एडिमा (त्वचा और यकृत रोग, दृष्टि और हृदय की हानि रोगों

8.	वनस्पति	सस्ता वसा, मूंगफली, बिनौला और अलसी का तेल	आर्थिक नुकसान, दृष्टि की हानि और हृदय रोग।
9.	कॉफी पाउडर	सेन्ना ऑसिडेंटलिस, गेहूं का भुना हुआ पाउडर, चना, खजूर के बीज, कासनी और इमली की भूसी, स्टोन पाउडर	दस्त, पेट के विकार, चक्कर आना और गंभीर जोड़ों का दर्द, आर्थिक नुकसान
10.	चाय की धूल पत्तियाँ	कृत्रिम रंग, चाय के अपशिष्ट, चने की भूसी, कॉफी की भूसी, काजू भ्रूणपोष, इमली के बीज का पाउडर, चूरा, समाप्त चाय, चिकोरी पाउडर, आयरन फिलिंग	कैंसर, टिटनेस, अपेंडिसाइटिस और छोटी आंत की समस्याएं।
11.	शीतल पेय मादक और अन्य पेय पदार्थ, फल उत्पादों	गैर-अनुमत रंग, कृत्रिम मिठास जैसे सैकरीन, डलसिन	विषाक्त / कार्सिनोजेनिक
12.	मिर्च पाउडर	चूरा, ईंट पाउडर, गैर-अनुमत रंग (सूडान डाई), आदि।	विषैला, पेट विकार, कार्सिनोजेनिक, दृष्टि की हानि और श्वसन संबंधी रोग
13.	हल्दी	पाउडर लेड क्रोमेट, विदेशी स्टार्च, सामान्य नमक, भूसी, मिट्टी का पदार्थ, मेटानिल पीला, अन्य एनिलिन डाई (गैर-अनुमत रंग)	कार्सिनोजेनिक, एनीमिया, गर्भपात, पक्षाघात, मस्तिष्क क्षति
14.	धनिया पाउडर	गाय के गोबर का चूर्ण	विषैला
15.	दाल साबुत और छिली हुई दालें (खाद्यान्न)	खेसारी दाल, कंकण, रंग	विषैला, लाइलाज पक्षाघात, ट्यूमर और कैंसर, रक्ताल्पता, मिरगी, तंत्रिका विषाक्तता
16.	मैदा, सूजी (रवा)	परिणामी आटा, सस्ता आटा, बोरिक एसिड, रेत, मिट्टी, कीड़े, लौह भराव, कृंतक बाल और मल, अतिरिक्त चोकर, चाक पाउडर।	पेट में दर्द
17.	गेहू	एरगॉट (जहरीला कवक)	विषैला
18.	हींग	तारपीन के तेल के आसवन के बाद प्राप्त साबुन स्टोनर, या अन्य मिट्टी की सामग्री, स्टार्च, विदेशी राल, अन्य राल कोलोफोन अवशेष।	पेट में दर्द
19.	गुड़	चाक पाउडर, चीनी का घोल, सोडियम कार्बोनेट, वाशिंग सोडा, गैर-अनुमत रंग।	आर्थिक नुकसान
20.	दालचीनी	कैसिया छाल।	आर्थिक नुकसान
21.	जीरा	चारकोल धूल से रंगे घास के बीज।	आर्थिक नुकसान
22.	केसर	मक्का सिल की सूखी टहनियाँ।	आर्थिक नुकसान
23.	आयोडीनयुक्त नमक	साधारण नमक, सफेद पत्थर का पाउडर।	पेट दर्द, पेट विकार, अपेंडिसाइटिस।
24.	साबुत मसाले	गंदगी, धूल, पुआल, कीट, क्षतिग्रस्त बीज, अन्य बीज, कृंतक बाल और मल।	आर्थिक नुकसान
25.	काली मिर्च	पपीते के बीज, हल्की काली मिर्च, मिनरल ऑयल से लेप, ब्लैक पिनहेड्स।	जिगर की समस्याएं और पेट विकार, आर्थिक हानि
26.	लौंग	वाष्पशील तेल निकाला हुआ या तेल रहित लौंग।	आर्थिक नुकसान

27.	धनिया पाउडर	स्टार्च, गाय या घोड़े का गोबर, पाउडर, चूरा।	विषैला
28.	पिथी चीनी	वाशिंग सोडा, चाक पाउडर, पीला रंग (गैर-अनुमति)।	आर्थिक नुकसान
29.	वाइन	डायथिलीन ग्लाइकॉल, बिलबेरी का रस (वैक्सीनियम मायर्टिलस) लेड एसीटेट के साथ।	विषैला
20.	मधु	उच्च फ्रक्टोज कॉर्न सिरप, सुक्रोज, गन्ना चीनी घोल, गुड़, स्टार्च, ग्लूकोज, मोम, पानी, गुड़।	आर्थिक नुकसान, मोटापा, मधुमेह, आंखें और तंत्रिका हर्जाना
31.	मिठाइयाँ	मेटानिल पीला।	ट्यूमर और कैंसर
32.	हरी मिर्च और मटर	मैलाकाइट हरी	विषैला

खाद्य अपमिश्रण हमारे समाज के लिए एक सामाजिक बुराई होने के साथ ही साथ एक बहुत बड़ी चुनौती भी है, जिससे निपटना नितांत आवश्यक है। यह शहरी-झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों, अर्ध-शहरी और साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक प्रचलित है जहाँ उपभोक्ताओं को प्रचलित खुदरा कीमतों का भुगतान करने के बाद भी मिलावटी या दूषित उत्पाद मिलते हैं। खाद्य अपमिश्रण का प्रमुख कारण लोगों का अपने अधिकारों और जिम्मेदारियों के प्रति अज्ञानता है। भारत सरकार ने खाद्य अपमिश्रण को रोकने के लिए कई कारगर कदम उठाए हैं जैसे कि एक एकीकृत व्यापक नियंत्रण कानून अधिनियम, जिसे खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम 2006, नियम 2011, विनियम 2011 के नाम से जाना जाता है। बेहतर ऑडिटिंग, खाद्य सुरक्षा प्रबंधन प्रणाली (FSMS), मिलावटी वस्तुओं का पता लगाने की क्षमता, रिकॉल और इस नए अधिनियम के तहत अन्य प्रणालियों की मदद से खाद्य अपमिश्रण को रोकने में काफी मदद मिल सकती है। जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग से कीटनाशकों के उपयोग को कम करके और उत्पादों की कटाई के बाद गुणवत्ता प्रबंधन को बढ़ाकर खाद्य सुरक्षा में सुधार किया जा सकता है। मिलावट नियंत्रण के लिए वैधानिक और नियामक प्राधिकरणों, उद्योग, वैज्ञानिक समुदाय, उपभोक्ता मार्गदर्शन, स्वैच्छिक एजेंसियों, उचित परामर्श और आईईसीटी (सूचना, शिक्षा, संचार और प्रशिक्षण) के माध्यम से एकीकृत दृष्टिकोण के समावेशन से इससे निजात पाया जा सकता है।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 52-53 (2021)

वायुमंडलीय ऑक्सीजन के संतुलन में शैवाल की भूमिका

एस. के. यादव एवं के. मजूमदार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

शैवाल (अल्गी) पादपजात के सबसे प्रारंभिक वर्ग का पौधा है। हिंदी में सामान्यतः इसे 'काई' भी कहते है। शैवाल जैविक विकास के दौरान उच्च वनस्पतियों के उत्तरोत्तर विकास एवं पादप विविधता को बनाए रखने में एक महत्वपूर्ण भमिका अदा करती है। इसकी संरचना बहुत ही सामान्य होती हैए जिसे थैलस कहते है। सामान्यतः शैवाल जलीय पारिस्थितिकी में पाए जाते है। लेकिन अपनी विशिष्ट संरचनात्मक एवं क्रियात्मक अनुकूलता के कारणए शैवाल की बहुत सी प्रजातियां ऐसी है जो की असामान्य आवास जैसे मिट्टी, वायु, अन्य पौधे, बर्फ, अति उष्ण इत्यादि परिवर्तनीय वातावरण में भी पाए जाते है। जलीय वातावरण में उगने वाले शैवाल भी अनेक तरह की अनुकूलताओ के कारण नदी, नाले, झील, तालाब, समुद्र इत्यादि में विविधता के साथ पाए जाते है। आकार की दृष्टि से भी शैवाल बहुत ही विविधता प्रदर्शित करती है। ये कुछ माइक्रोन (जैसे *माइक्रोसिस्टिस, डायटम्स, साइनोबैक्टेरिया* इत्यादि) से लेकर कई मीटर तक (जैसे *अल्वा, सर्गासम, फ्यूकस, लेमिनारिया* इत्यादि) के होते है। शैवाल को उसके रंगए आकारए संरचनाए रंगद्रव्य (पिगमेंट्स) संरक्षित भोजन (रिजर्व फ़ूड), कोशिका भित्ति की प्रकृति इत्यादि के आधार पर कुल ग्यारह भागो (क्लास) में बांटा जाता है (फ्रिच, 1935 के अनुसार) जो निम्नलिखित है : क्लोरोफाइसी, जैंथोफाइसी, क्राइसोफाइसी, बेसिलरिओफाइसी, क्रिप्टोफाइसी, डाइनोफाइसी, क्लोरोमोनोडिनी, युग्लीनोफाइसी, फियोफाइसी, रोडोफाइसी, मिक्सोफाइसी साइनोफाइसी)। विश्व भर में शैवालों की लगभग 44 हजार जातियां (टैक्सा) पायी जाती है (गुरी, 2012) जिसमे से भारत में लगभग 7411 जातियां (टैक्सा) पायी जाती है (प्लांट डिस्कवरी, 2018)।

स्थलीय पौधों की तरह शैवालों में भी प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) की क्षमता होती है जो इसे सूर्य की रोशनी में CO_2 एवं H_2O को सिंथेसिस कर ऑर्गनिक तत्व (कार्बोहाइड्रेट) में बदल कर ऑक्सीजन छोड़ती है। शैवाल में क्लोरोफिल के अलावा कुछ अन्य रंगद्रव्य जैसे कैरोटीनोइड्स, फाइकोबिलीप्रोटीन्स (फाइकोसियनिन्स, फाइकोएरीथ्रिंस) इत्यादि होते है जो सूर्य की रोशनी से विभिन्न तरंग दैर्ध्य (वेभलेंग्थ) की किरणो को अवशोषित करती है। अतः विभिन्न शैवालों द्वारा फोटोसिंथेसिस की क्षमता उसमे पाए जाने वाले रंगद्रव्य (पिगमेंट्स) की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

शैवाल का जलीय पारिस्थितिकी में महत्त्व

शैवाल जलीय पारिस्थितिकी में खाद्य श्रृंखला में प्राथमिक उत्पादक का काम करती है। यह जलीय जीवो जैसे मछली, क्रैब, स्पंज, मोलस्क इत्यादि के लिए भोजन एवं प्रजनन प्रक्रिया हेतु आवश्यक आवास (ब्रीडिंग ग्राउंड) प्रदान करती है। क्लोरोफील की उपस्थिति के कारण शैवाल स्थलीय उच्च पौधों की तरह ऑक्सीजन का उत्सर्जन कर जल में पाए जाने वाले विघटित/ घुलित ऑक्सीजन को संतुलित करती है जिसे जलीय जीव श्वसन प्रक्रिया में उपयोग करती है। जल में घुलित ऑक्सीजन (DO) की संतुलित मात्रा जलीय पारिस्थितिकी के लिए अत्यंत आवश्यक होती है। किसी कारण से जब जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है तो जलीय जीवो के लिए समस्याएं उत्पन्न हो जाती है। सामान्यतः मॉनसून के दौरान जब वर्षा जल का बहाव नदियों, तालाबों, झीलों या समुद्र में होता है तो उस समय जल की DO वैल्यू बढ़ जाती है। इसीतरह, ग्रीष्म ऋतू में वाष्पीकरण की अधिक मात्रा के कारण DO की मात्रा घट जाती है।

शैवाल का वायुमंडलीय ऑक्सीजन के संतुलन में महत्त्व

हम जानते है की पृथ्वी का लगभग 70% भाग जल क्षेत्र (महासागर) है। बाकि 30% भाग ही स्थल है जिसपर मनुष्य के साथ-साथ अन्य जीव जंतुओं एवं नदी, झील, पर्वतमालाएं, वन, मरुस्थल, सवाना इत्यादि अनेक तरह की पारिस्थितिकी पाई जाती है। जैविक विकास के क्रम में सबसे पहले प्रोकैरियोटिक शैवाल (जैसे बीजीए) की उत्पति हुई जो की प्रतिकूल वातावरण एवं ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में भी प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) कर ऑक्सीजन उत्सर्जित किया (चैपमैन, 2013) । इन प्रोकैरियोटिक शैवालो द्वारा उत्सर्जित ऑक्सीजन की अधिकांश मात्रा महासागरों में अवस्थित जल द्वारा अवशोषित कर ली गई। फिर लाखो-करोड़ो वर्षो तक वायुमंडल में ऑक्सीजन का संचय होता गया जो कालांतर में अन्य यूकैरियोटिक जीवो जैसे अन्य शैवाल, स्थलीय पेड़ पौधों, जीव जन्तुओ इत्यादि की उत्पति हुई। हमारे वायुमंडल में ऑक्सीजन का प्रतिशत लगभग 21% है जो पृथ्वी पर लाखो-करोड़ो वर्षो तक हुए प्रकाश संश्लेषण के कारण संचित हुआ होगा।

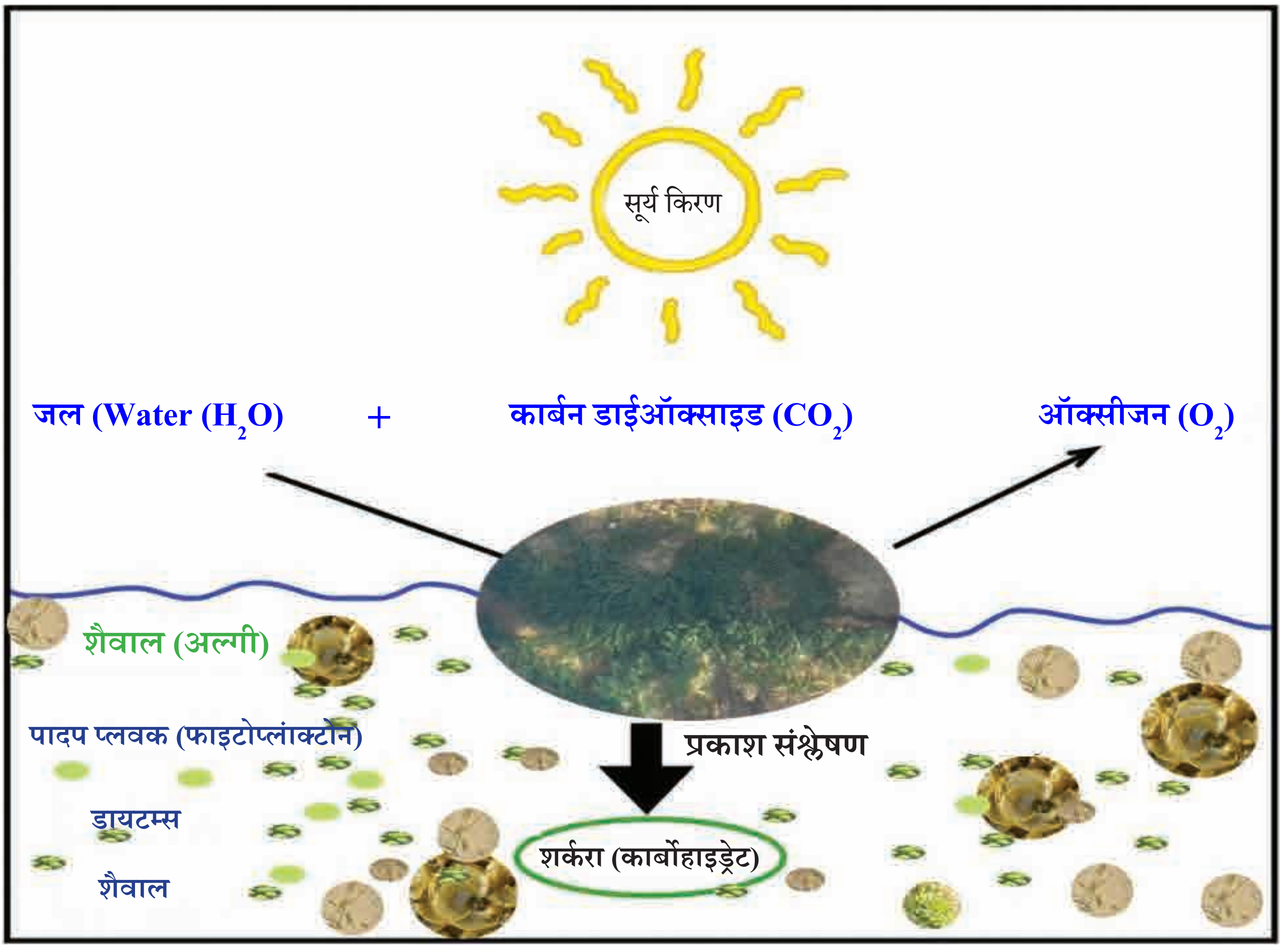

शैवालों द्वारा प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया एवं ऑक्सीजन उत्सर्जन का प्रतीकात्मक विवरण

इस संचित ऑक्सीजन के भंडार में शैवालों द्वारा उत्सर्जित ऑक्सीजन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। क्योकि, स्थलीय पौधों द्वारा उत्सर्जित ऑक्सीजन की अधिकांश हिस्सा पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीव जन्तुओ द्वारा उपयोग कर लिया जाता है। साथ ही, जलीय पारिस्थितिकी, जो की पृथ्वी की सतहिय क्षेत्रफल का लगभग 70 प्रतिशत है, शैवालों (फाइटो प्लांकटोंस, डायटम्स, सुक्ष्म शैवाल, दीर्घ शैवाल इत्यादि) को एक विस्तृत आवास प्रदान करती है। इस तरह, अनुमानतः वायुमंडल में संचित ऑक्सीजन की अधिकांश मात्रा शैवालों द्वारा उत्सर्जित किया गया है। अनुमानतः हमारे वायुमंडल की लगभग 30-50% ऑक्सीजन का उत्सर्जन इन शैवालों के द्वारा किया जाता है।

क्लोरेल्ला, जो क्लोरोफाइसी वर्ग का एककोशिकीय शैवाल है, अपनी अद्भुत उपयोगिता के लिए प्रसिद्ध है। इसे अंतरिक्ष शैवाल भी कहते है। यह आकार में गोलाकार एवं 2-10 माइक्रॉन की परिधि की होती है। यह मानव के लिए एक पौष्टिक खाद्य शैवाल (एडिबल अल्गी) है जिसे अंतरिक्षयात्री अपने साथ ले जाते है क्योकि यह बड़े पैमाने पर ऑक्सीजन छोड़ती है एवं अंतरिक्षयात्री द्वारा छोड़े गए कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करती है। क्लोरेल्ला की इस प्रवृति के कारण इस महत्वपूर्ण शैवाल पर अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा सहित कई अनुसंधान संस्थानों द्वारा अनुसन्धान जारी है। अतः पृथ्वी के वायुमंडल में ऑक्सीजन की उपस्थिति को संतुलित करने में शैवाल एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

निष्कर्ष: शैवाल पादप विविधता का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह जलीय पारिस्थितिकी में आहार श्रृंखला को संतुलित करने के साथ-साथ वायुमंडल में ऑक्सीजन की उपलब्धता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शैवाल वनस्पति जगत का एक प्रारंभिक (प्रिमिटिव) पौधा होने के बावजूद भी पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व को बनाये रखने में अहम योगदान रखती है। अतः इसके संरक्षण पर जोर देते हुए एवं इसपर और अधिक अनुसन्धान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 54-58 (2021)

विविध जलीय पौधों का भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान में गैर-स्थानिक संरक्षण

शिव कुमार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान, नोएडा

भारतीय गणराज्य वनस्पति उद्यान की स्थापना जून 1992 में रियो डी जेनिरो में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में जैव-विविधता संधि [जिसे कन्वेंशन ऑन बायोलॉजिकल डायवर्सिटी(सीबीडी) पर हस्ताक्षर किए जाने के उपरांत नोएडा में, यमुना के रेतीले व उभरे 200 एकड़ भूभाग पर दिनांक 19.03.1997 को हुआ। पृथ्वी सम्मेलन में बनी सहमति एवं अनुच्छेद 9 के अनुसार 23 राज्यों के विभिन्न परिवेशों के साथ-साथ स्थानिक एवं संकटग्रस्त पौधों को लाकर, बाह्यस्थान या गैर-स्थानिक संरक्षण (एक्स-सिटू कॉर्जवेशन) विधि द्वारा संरक्षित किया जा चुका है। जिसमें धरातलीय या स्थलीय (टेरेस्ट्रियल) पौधों की संख्या अत्यधिक है। अगर हम जलीय पौधों की बात करें, तो उद्यान में अवस्थित 3 मानव निर्मित जलाशयों में, सबसे बड़ा जलाशय 75 फुट लम्बा, 48 फुट चौड़ा तथा 3 फुट गहरा का निर्माण कार्य सितम्बर, 2015 में पूरा हुआ। इसमें भूमिगत क्षारीय पानी भरे जाने के कारण, प्राकृतिक उपचार, जिसमें गोबर तथा कार्बनिक उर्वक का प्रयोग कर जलीय जीव-जन्तुओं को उद्धवित किया गया।

प्रारम्भिक अध्ययन से यह पता चला कि कुल 28 प्रकार के जलीय प्रजातियों में 11 पादप प्लवक, 1 बृहद शैवाल, 5 जलमग्न मैक्रोफाइटस तथा 11 संरक्षित उद्धावी मैक्रोफाइटस या जलोद्भिद में अल्टरनेथेरा फिलोक्सेरोइड्स व बाकोपा मोनिएरी प्राकृतिक रुप में उत्पन्न हुए। जबकि एकोरस कैलमस, निम्फिया मेक्सिकाना, निम्फिया पुबेसेंस और निम्फिया को 2013 के पहले जलाशय में स्थापित किया जा चुका था। बाकि के पाँच जलीय पादप जैसे इकिनोडोरस पालिफोलियस और निम्फिया कैरुलिया को एफ.आर.एल.एच.टी., बेंगेलुरु से दिनांक 13.08.2013 को, निम्फिया कोलोराटा पीटर को यमुना जैवविविधता पार्क, दिल्ली से दिनांक 29.09.2015 को तथा नेलुम्बो न्यूसीफेरा गर्टन. को चार कोशिशों (ए.जे.सी.बी.आइ.बी.जी., हावड़ा से 01.03.2014, 25.10.2014 और 05.09.2015 को तथा यमुना जैव-

विविधता पार्क, दिल्ली से दिनांक 18.11.2015 को लाने) के बाद पाचवें कोशिश में सितंबर, 2015 में बने सबसे बड़े जलाशय में खुद के खर्च पर ए.जे.सी.बी.आइ.बी.जी., हावड़ा से दिनांक 08.04.2016 को लाकर सफलता पुर्वक स्थापित किया गया। इसी तरह उक्त जलाशय में विक्टोरिया अमज़ोनिका के बीज से बने पहले पौध को 16.10.2015 को देखा गया परन्तु नोएडा में पड़ने वाले सर्दी/ठंड के तापमान को वह सहन न कर सका। बाद में 08.04.2016 को इसके पौध को पुन: हावड़ा से लाकर सफलता पुर्वक स्थापित किया गया परन्तु, वार्षिक पौधा होने के कारण, बिना पुष्प धारण किए सर्दी/ठंड का महीना आने पर स्वत: खत्म हो गया। इसके पश्चात, इसके पौध को पुन: एक बार, निदेशक महोदय के देख-रेख में 26.07.2021 को ए.जे.सी.ब.आइ.जी., हावड़ा से लाकर स्थापित किया गया। सभी उद्धावी मैक्रोफाइटस या जलोद्भिद पादपों के प्रकार एवं गुण कुछ निम्न प्रकार के हैं :

एकोरस कैलमस

एकोरस कैलमस को साधारण बोल-चाल की भाषा में 'बच' या 'स्वीट फ्लैग' कहा जाता है जो एरेसी कुल का एक बहुवर्षी और उभयचर (एम्फिबियन्स) प्रजाति है। बच, भारतवर्ष का एक स्थानिक, आईयूसीएन लाल सूची के अनुसार 'बहुत कम ख़तरा' [लिस्ट कन्सर्न (IUCN 3.1)] तथा लोकप्रिय औषधीय पौधा है। यह पौधा 45 से 60 सें.मी. होता है। इसके प्रकंद सुगंधित व स्वाद कड़वा होता है। इसकी शाखायें बहुत विस्तृत होती है। पत्तियाँ सीधी, सपाट, किनारा चिकना व कभी-कभी लहरदार, रेखाकार, लंबी मोटी व मध्य शिराएँ जुड़ी, 0.7 से 1.7 सें.मी. चौड़ी, ऊपरी सिरा पतला, तलवार की आकार की तरह होता है। जो पौधे जल में उगते हैं, फूल उसी पौधे में, 3 से 8 सें. मी. लंबे, बेलनाकार होते हैं। पौधे में प्रर्याप्त औषधीय गुण के कारण, इसका उपयोग भारत में अनेक आयुर्वेदिक औषधियों द्वारा पेट से सम्बधित रोग, दर्द, इत्यादि में किया जाता है। इसकी पत्तियों से नींबू की तरह सुगंध आती है और जड़ों से मधुर मीठी गंध। इसके प्रकंद को कीट्नाशक के साथ-साथ इससे बनने वाले तेल को खाद्य पदार्थो को सुगंधित करने और अल्कोहलिक पेय में उपयोग किया जाता है। परन्तु, अत्यधिक मात्रा या दिनों तक इसका उपयोग करने पर जी मिचलाना तथा लम्बे समय तक उल्टी जैसे दूष्परिणाम हो सकता है। व्यवसायिक तौर पर इसके बढ़ते औषधीय उपयोग के कारण, जंगलों में इनकी उपलब्धता कम होते जा रही है। सजावट के लिए इसे उद्यानों में जमीन और जलाशयों में लगाया जाता है।

अल्टरनेथेरा फिलोक्सेरोइडस

अल्टरनेथेरा फिलोक्सेरोइड्स को आम बोल-चाल की भाषा में 'घड़ियाल खरपतवार' (एलीगेटर वीड) कहा जाता है। यह ऐमरैंथेसी कुल का एक परदेशी, बहुवर्षी जाति है जो ग्रर्मी के दिनों में स्थलीय एवं जलीय दोनों अवस्था में ज्यादा पाया जाता है। स्टोलोनिफेरस होने कारण विभिन्न दिशाओं में फैलने वाले खोखले तने के उपर सामान्य एवं विपरीत पर्ण-विन्यास प्राय: ग़ाँठ के ठीक ऊपर बनते हैं। इसकी पत्तियाँ चमकीला, भाले के जैसा, विपरीत, बिना डंठल का, किनारा चिकना तथा लम्बाई 2 से 7 सें.मी. और चौड़ाई 1 से 2 सें.मी. होता है। तने की अधिकतम लम्बाई 10 मीटर तक हो सकता है। इस पौधे का पारिस्थितिकी प्रणालियों पर बहुत ज्यादा बुरा असर होता है जैसे जलाशयों में इसके होने से जल के प्राकृतिक प्रवाह को प्रभावित करने के साथ-साथ जल में मच्छड़ों के संख्या में वृद्धि करता है। अत: जलाशयों से किसी प्रकार इन्हें खत्म करने के लिए जैविक मल्चिंग या बाहर निकालकर किया जा सकता है। इसके अलावे जैविक निवारण प्रक्रिया में पिस्सू भृंग (फ्ली बिटल) जिसे अगेसिकल हायग्रोफिला कहते हैं को इन पर छोड़ दिया जाता है।

बाकोपा मोनिएरी

बाकोपा मोनिएरी को आमतौर पर 'ब्राह्मी' या 'सफेद चमनी', एक औषधीय पौधा के रुप में जाना जाता है। यह प्लान्टेजिनेसी कुल का एक जाति है तथा नम भूमि के साथ-साथ मीठे जलाशयों के किनारे अत्यधिक तथा इसके अलावे यह नुनखरा (बैरैकिश) पानी में भी पाया जाता है। इसके तने और पत्तियाँ मुलामय, गूदेदार और फूल सफेद होते हैं। यह भारतवर्ष का स्थानिक (एंडेमिक) तथा आईयूसीएन लाल सूची के अनुसार 'बहुत कम ख़तरा' [लिस्ट कन्सर्न (IUCN 3.1)] वाला पौधा है। भारत वर्ष में इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे संस्कृत में सौम्यलता, मलयालम में वर्ण, नीरब्राम्ही, मराठी में घोल, गुजराती में जल ब्राह्मी, जल नेवरी, आदि। आयुर्वेद के अनुसार, यह पूर्ण रूपेण पौराणिक औषधीय पौधा है। इसे बहुतायत बुद्धि वृद्धि तथा नाड़ियों एवं हृदय को पौष्टिकता प्रदान करने वाला पौधा माना जाता है। इसमें कब्ज को दूर करने के साथ–साथ रक्त शुद्ध करने के गुण भी पाये जाते हैं। इसके पत्ते के रस को पेट्रोल के साथ मिलाकर लगाने से गठिया दूर हो सकता है। इसके अनियंत्रित मात्रा में उपयोग किए जाने पर यह विभिन्न प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव जैसे जी मिचलाना, आंतों की गतिशीलता और पाचनतंत्र को बिगाड़ सकता है।

परन्तु, अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (फ़ूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन), 2019 के अनुसार पूरक आहार बनाने वाले निर्माताओं को यह चेताया है कि उनके द्वारा विज्ञापित विज्ञापनों के अनुसार, उनका उत्पाद पेट की बीमारियों, अल्जाइमर रोग, हाइपोग्लाइसीमिया, रक्त

चाप, घबराहट या व्याकुलता को ठीक नहीं करता। इसके अलावे यह भी बतलाया है कि वह किसी भी उत्पाद में इसके औषधीय उपयोग को स्वीकृति प्रदान नहीं करता।

इकिनोडोरस पालिफोलियस

इकिनोडोरस पालिफोलियस (नीस और मार्ट.) जे.एफ्. मैकर्ब्., एलिसमेटेसी कुल का दलदल में उगने वाला एक विदेशी जाति का पौधा है। स्थानिय स्तर पर इसे 'मेक्सिकन स्वोर्ड प्लांट' के नाम से भी जाना जाता है। पत्ती के डंठल पर लम्बाई में लकीरें और ऊपरी तरफ नाली की तरह गड्ढा (ग्रुव) होता है। पत्तियाँ चिकनी, अंडाकार, बराबर किनारों, स्पष्ट समानांतर लम्बे नसों वाला, चौड़ाई लम्बाई के मुकाबले आधा होता है। पुष्प तश्तरी के आकार का, 2 से 2.5 सें.मी., सफेद, 3 गोलाकार, थोड़ा सिकुड़े हुए पंखुड़ियों, केन्द्र में 12 गंदले या फीके पीले और छोटे पुंकेसर (स्टेमिना) युक्त होता है। इसे जलाशयों में सजावट व एक्वैरियम संयंत्र में आसानी से उगाया जा सकता है परन्तु, जल्दी से बढ़ने वाले इनके पत्तियों को आवश्यकतानुसार कम करते रहना चाहिए।

नेलुम्बो न्यूसीफेरा

नेलुम्बो न्यूसीफेरा, नेलुंबोनेसी कुल का एक बहुवर्षी, जलीय, स्थानिक जाति है जिसे बोल-चाल की भाषा में 'भारतीय या पवित्र कमल' या 'लोटस' कहा जाता है। भारत एवं वियतनाम का यह 'राष्ट्रीय पुष्प' है। उत्तर-पूर्व चाइना के एक झील में 1,300 वर्ष पुराने मिले बीज को सफलता पूर्वक अंकुरित किए जाने के कारण, वे इसे लम्बे जीवन का प्रतीक मानते हैं। इस पौधे को इसके बहुमुखी उपयोगिता के कारण, 3,000 वर्षो से प्रकंद या बीज से उगाया जा रहा है। पत्तियाँ लम्बे डंठल पर गोलाकार, गंदला हरा, जलाशय के बाहर निकला हुआ होता है। पत्तों पर पानी की बुंदे नहीं चिपकती। भारतीय कमल के फूल का रंग प्राय: गुलाबी या सफेद पर गुलाबी रंग लिए हुए 1, 2 या अनगित पंक्तियों में पंखुड़ियों का समुह, पत्तियों की तरह जल सतह से बाहर निकला होता है। इस पौधे का हर भाग जैसे प्रकंद, तना, पत्ते, पुष्प और बीज को विभिन्न प्रकार से खाने-पीने के साथ-साथ औषधीय गुण के कारण अनेक रोगों के उपचार में प्रयोग किया जाता है। इसके अलावे, इसका उपयोग दूषित जल से विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों के साथ-साथ भारी धातुओं को हटाने के लिए प्रयोग किया जाता है। हिन्दू और बौद्ध धर्मो में इसका ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक क्रिया-कलापों में व्यापक महत्व है

निम्फिया कैरुलिया

निम्फिया कैरुलिया सेव., निम्फैसी कुल का एक बहुवर्षी, जलीय, विदेशी, मीठे जल का प्रजाति है जिसे बोल-चाल की भाषा में इसके फूल के रंग के अनुरुप या नील नामक अपने मूल निवास स्थान पर मिलने के कारण 'नील कमल' या 'नीला कुमुद' कहा जाता है। सामान्यत: पौधे जलमग्न प्रकंद (जो खाने योग्य होता है) या बीज या फिर पत्तियों के ऊपर इसके केन्द्र पर शाकीय कोशिका से पिण्डज पौध बनता है जिसकी गोलाई में फैलाव 1 मीटर तक हो सकता है। पत्तियां मोटे तौर पर हृदयाकार और गोलाकार, उप-अण्डाकार, तीव्र या दुमदार शीर्ष के साथ, 8 से 40 सें.मी. (3 से 16 इंच) तथा पत्तियों का दोनों भाग कभी-कभी एक-दूसरे पर थोड़ा अच्छादित रहता है। पत्ते का ऊपरी भाग चिकना व हरा, केन्द्र से 8 से 11 जोड़े प्रथम और 6 से 8 जोड़े द्वितीय नसें होती हैं तथा निचले भाग पर हरा या कभी लाल या लालिमा लिए हुए बैंगनी नसें काफी उभरा हुआ दिखाई देता है। इसका डंठल मोटा, काला-हरा और स्पंजी होता है। इसके फूल का व्यास 10 से 15 सें.मी. (4 से 6 इंच) तथा पंखुड़ियाँ प्राय: नीला या हल्के नीले-सफेद से लेकर आसमानी नीले रंग की होती हैं तथा इसका मध्य भाग हल्के पीले रंग में बदलता जाता है। बहुतायत, सजावट के लिए इसे उगाया जाता है। इसके फूल से इत्र बनाया जाता है जिसका उपयोग बृहत रुप में अरोमाथेरेपी (सुगंध द्वारा चिकित्सा या औषधीय) उपचार में किया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मिस्र में इसे काफी महत्व दिया जाता है। लातविया, पोलैंड और रुस में इससे बनाई जाने वाली रसायन गैर कानूनी है तथा इससे बनने वाले रसायन जिसका उपयोग अनुसूची 1 दवा के रुप में किया जाता है पकड़े जाने पर सजा के साथ-साथ आर्थिक दंड का प्रावधान भी है।

निम्फिया कोलोराटा

निम्फिया कोलोराटा जो निम्फैसी कुल का एक बहुवर्षी, जलीय, विदेशी जाति है जिसे बोल-चाल की भाषा में 'ब्लू पिग्मी' या 'नीली पंखुड़ी' या 'बैंगनी कुमुद' कहा जाता है। सामान्यत: पौधे प्रकंद के द्वारा उत्पन्न होते हैं। पत्तियाँ गोलाकार, ऊपरी सतह हरी तथा निचली सतह नीली -बैंगनी होती है। पत्तियों का आकार लगभग 20 से 23 सें.मी. और पौधे का फैलाव 0.9 से 1.8 मी. तक होता है। इसका फूल दिन के उजाले में खिलता है तथा पिण्डज (विविपेरस) नहीं है। इसके फूल गहरे नीले से बैंगनी रंग के होते हैं जिसमें बाह्यदल 4 से 5 और पंखुड़ी 13 से 15 हो सकती हैं। पुष्पासन (थैलेमस) प्याला के आकार का, व्यास 11 से 14 सें.मी. तक हो सकता है। इसके फूल बहुत दिनों तक खिले रहते हैं जिसके कारण इसे सजावट के लिए खुले उद्यान या बड़े गमलों में भी उगाया जा सकता है।

निम्फिया मेक्सिकाना

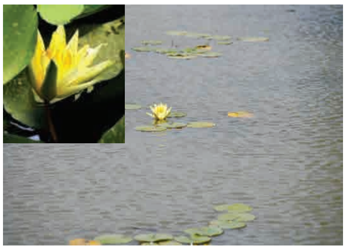

निम्फिया मेक्सिकाना निम्फैसी कुल का एक बहुवर्षी, जलीय, विदेशी जाति है जिसे आम बोल-चाल की भाषा में 'मेक्सिकन केला कुमुद' या 'पीला कुमुद' कहा जाता है। इसका प्रकंद काफी मोटा और बड़ा, रेंगने वाले स्पंजी स्टोलन, जिसमें केले के जैसे छोटे-छोटे पीले जड़ों का गुच्छा होता है। स्पंजी स्टोलन से नए पौध और इसके परिपक्व फूलों पर पिण्डज पौध बनते हैं। इसका पत्ता सपाट, सामान्यत: थोड़ा मोटा, गोलाकार, 8 से 12 सें.मी., बैंगनी या भूरे रंग के साथ गहरा हरा, धब्बेदार के साथ-साथ, दाँतेदार और जल के सतह पर तैरता रहता है। फूल में बाह्यदल (सेपल) तारे की तरह और जिनका रंग हरा-पीला तथा पंखुड़ी प्राय: पीले रंग होता है। फूल प्राय: ग्रर्मी से लेकर वसंत के दिनों में 6 सें.मी. साईज का खिलता है और रात में बन्द हो जाता है। इसे सजावट के लिए खुले उद्यान या बड़े गमलों में उगाया जा सकता है। यह जलाशयों में एक बार उगाने पर अपने तरह के अन्य पौधों के बीच में घुसपैठिया की तरह बढ़ते हुए बर्चस्व कायम कर लेता है।

निम्फिया पुबेसेंस

निम्फिया पुबेसेंस, निम्फैसी कुल का एक बहुवर्षी, मीठे जल का स्थानिक (एंडेमिक) जाति है जिसे बोल-चाल की भाषा में 'काको' या 'रोएंदार या सफेद कुमुद' कहा जाता है। आईयूसीएन लाल सूची के अनुसार यह 'बहुत कम ख़तरा' [लिस्ट कन्सर्न (IUCN 3.1)] वाला पौधा है। नए पौधे सुडौल प्रकंद से निकलते हैं। पत्तियाँ प्राय: ह्रदयाकार या गोलाकार या अण्डाकार, 15 से 26 सें.मी., कागज की तरह पतला, दाँतेदार, निचले तरफ घने रोएँ के साथ हमेशा तैरते रहता है। ख़िले हुए फूल का रंग प्राय: सफेद तथा व्यास 5 से 15 सें. मी., 12 से 14 चमकीले पंखुड़ियाँ के साथ होती हैं। प्राय: दिन में ये बन्द और रात को खिले रहते हैं। पुंकेसर 1.5 से 35 सें.मी. लम्बे जिनका आधार चौड़ा होता है 3 पंक्तियों (लाइन) में अवस्थित होते हैं। अंडप 15 से 30 की संख्या में मुग्दर की तरह फूल के मध्य भाग को ढके रहता है। यह छिछले झील या तालाब या रेल/सड़क के किनारे गड्ढ़ों के क्षारीय पानी में उगता है तथा वातावरण का तापमान 15° सें.ग्रे. से कम होने पर प्रसुप्त या सुषुप्ता अवस्था (डोरमेंट) में चला जाता है।

निम्फिया रुब्रा

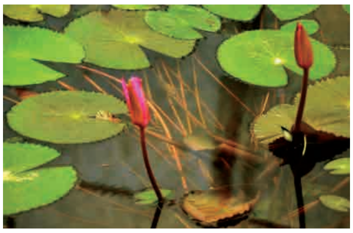

चुनिंदा पादप के विश्व जांच-सूची (वर्ल्ड चेकलिस्ट ऑफ सेलेक्टेट प्लांट : WCSP, 2013) के अनुसार निम्फिया रुब्रा, निम्फैसी कुल का एक स्वीकृत जाति है। निम्फिया पुबेसेंस की तरह निम्फिया रुब्रा भी एक बहुवर्षी, मीठे जल का स्थानिक (एंडेमिक) जाति है जिसे बोल-चाल की भाषा में 'काको' या 'लाल कुमुद' कहा जाता है। इसके साथ आईयूसीएन लाल सूची के अनुसार यह प्रजाति भी 'बहुत कम ख़तरा' [लिस्ट कन्सर्न (IUCN 3.1)] वाला है। प्रकंद छोटा, अंडाकार तथा स्टोलोनिफेरस होता है। पत्तियाँ लगभग गोलाकार, ढालदार से मोटे तौर पर अंडाकार, लगभग 12 से 30 x 9 से 26 सें.मी., आधार अत्यधिक तीर की तरह कम, तीक्ष्ण दाँतेदार और लहरनुमा, अग्र भाग भोथा से चौड़ा गढ़े के साथ लालिमा लिए हुए हरे रंग का तथा निचला भाग कोमल होता है। पत्तियों का दोनों पीछला भाग एक-दूसरे से अलग होता है। फूल लम्बे डंठल पर साल

भर 8 से 16 सें.मी. व्यास का दिन में खिलता है और रात में बन्द हो जाता है। इसमें 4 बाह्यदल (सेपल), आयताकार-भालाकार, अग्र भाग थोड़ा भोथा, बाहर के तरफ भूरे-हरे रंग का होता है तथा 10 से 25 पंखुड़ियाँ (पेटल) गहरे लाल या गुलाबी रंग, आयताकार-भालाकार, आधार पतला तथा अग्र भाग थोड़ा भोथा होता है। पुंकेसर संख्या में अनेक, अन्दर के तरफ थोड़ा बैंगनी, भालाकार, पराग-कोष से बड़ा होता है। अंडप हर तरफ से जुड़ा, अंडाशय उर्ध्ववर्ती, 19 से 27 कोष्ठक, योनि-छत्र का मध्य भाग थोड़ा ऊपर निकला हुआ, प्राय: सपाट, जिसमें 10 से 20 धारियां होती हैं। तना एवं पत्तियाँ सब्जी के रुप में खाने योग्य होने के साथ सजावट के लिए कुछ स्थानीय समुदाय के लोगों द्वारा इसे खुले जलाशयों, उद्यानों या बड़े गमलों में भी उगाया जाता है।

विक्टोरिया अमज़ोनिका

विक्टोरिया अमज़ोनिका, निम्फैसी कुल का एक जाति है। यह जलीय जातियों में सबसे बड़े पत्ते (व्यास 3 मी. तक) धारण करने व बोलीविया से अमेज़ॉन क्षेत्र में पाया जाने वाला पादप है। साधारण बोल-चाल की भाषा में इसे 'विशाल जलीय लिलि' कहा जाता है। पत्तियों का किनारा 3 से 5 सें.मी. ऊपर उठा हुआ होता है। पत्ती की ऊपरी सतह हरे या भूरे-हरे रंग और कम चमकदार व चिकना होता है तथा निचले भाग पर उभरे हुए नसें, रंग बिलकुल भूरा व काँटो से भरा होता है पत्तियों के ऊपरी व पंखुड़ियों को छोड़, पौधे के हर भाग जैसे शिराओं, फूलों के तनों और बाह्यदल पर कांटे होते हैं। फूल लगभग 30 सें.मी. व्यास का, सुगंध प्रदान करने वाला, पहले दिन सफेद, दूसरे दिन गुलाबी व तीसरे दिन गहरे बैंगनी/लाल रंग में बदल जाता है। फिर जल के अन्दर समाकर फल का निर्माण करता है। फूल शाम से लेकर देर रात तक खिलते रहता है। इसके डठंल तथा बड़े आकार वाले पत्तियों में हवा भरे होने के कारण, इसमें जल के सतह पर उत्पलवित रहने की इतनी क्षमता होती है कि यह 80 से 100 किलोग्राम तक वजन का भार सहन कर सकता है। शायद, इसी कारण, विश्व भर में हर कोई इसे अपने वनस्पति उद्यान, जैसे बड़े ग्रीन हाउस या निजी जलाशयों में उगाने के लिए उत्सुक रहता है। इसे उगाने के लिए उच्च तापमान (20° सें.ग्रे. से ऊपर) की आवश्यकता होती है। इसके बीजों (सीड्स) को मक्के के लावे की तरह खाया जा सकता है।

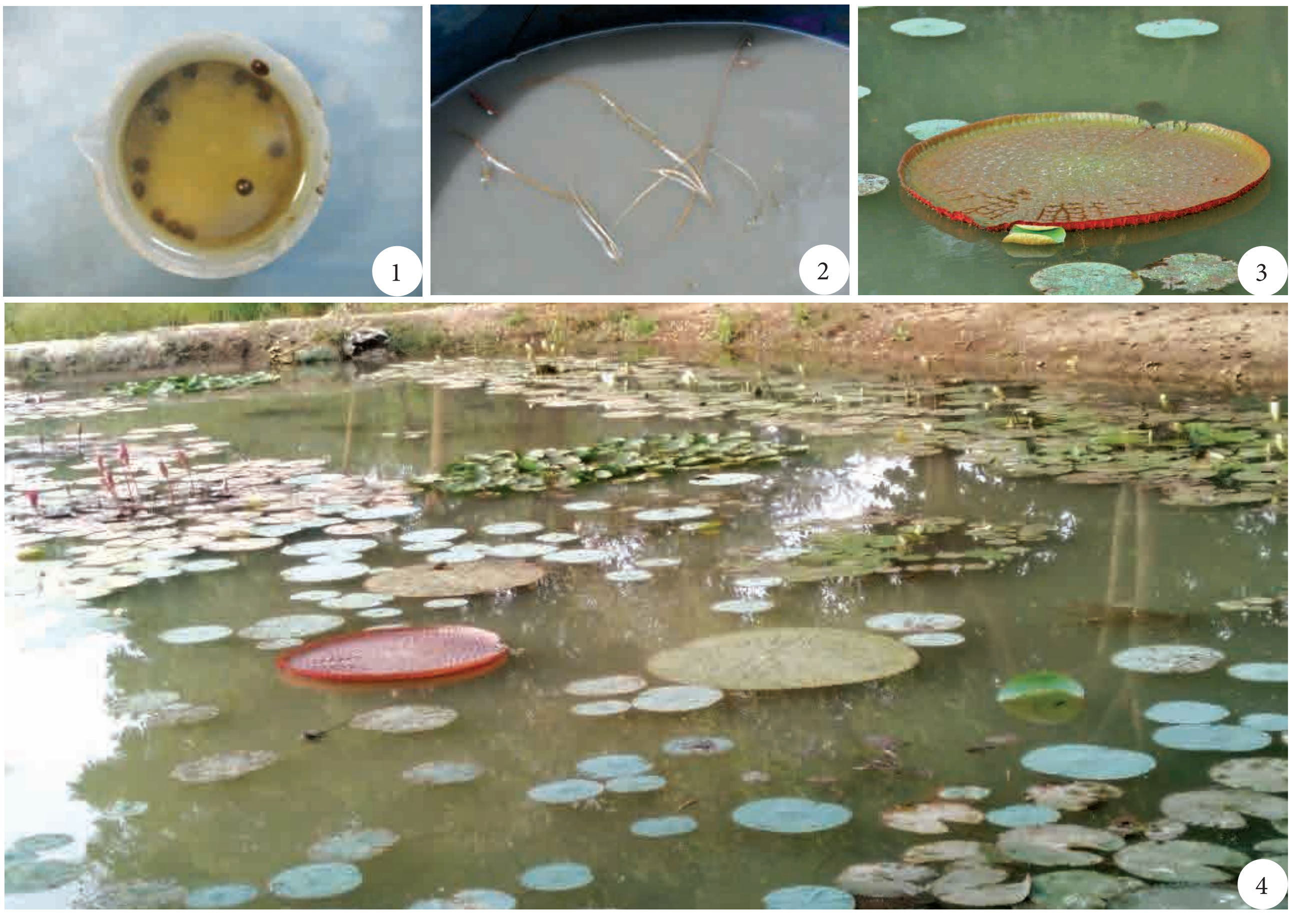

1. *विक्टोरिया अमज़ोनिका* के बीज, 2. बीज से *विक्टोरिया अमज़ोनिका* के बने पौध, 3. *विक्टोरिया अमज़ोनिका* का विकसित हो रहा एक पत्ता और 4. पूरे जलाशय में उग रहे कमल सहित सभी जलीय पौधे।

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 59 (2021)

आओ मिलकर पेड़ लगाये

नितिषा श्रीवास्तव
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्रीय केन्द्र, प्रयागराज, उत्तरप्रदेश

आओ मिलकर पेड़ लगाये,
धरती को खुशहाल बनाए।

धरती का रखें जो ख्याल,
जन-जीवन होगा खुशहाल।

नदियाँ बहती रहें अनवरत,
बागों में हो कलरव का गान।

पेड़ नही काटे अब कोई,
मिलकर प्रण ले सब कोई।

न कचरे का ढ़ेर लगाओ,
उस से हरी खाद बनाओ।

करो वाहनों का कम इस्तेमाल,
इससे धरती होगी खुशहाल।

नदियों में न छोड़ो दूषित जल,
जल जीवन का है आधार।

मृदा अपरदन को रोकोगे,
तभी धरा को हरा देखोगे।

प्लास्टिक का अब बंद करो उपयोग,
बहुत चुकी यह धरती भोग।

इसकी पीड़ा को पहचानो,
जीवन दायिनी है ये जानो।

हो स्वच्छता में सबका योगदान,
तभी बनेगा देश महान।

धरा जननी है, करें स्वीकार,
तभी सृजन होगा साकार।

चित्रांकन : अनवि अश

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 60 (2021)

वसुधा सुंदरी

विभूति प्रकाश
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मध्य क्षेत्रीय केन्द्र, प्रयागराज, उत्तरप्रदेश

यह प्रकृति जो सेवा देती है, धरती को फलों से भरती है |
आड़ू, अमरुद, अनार, आम देती है, सबको यह निष्काम |
सागर, सरिता, दरिया, वन, उपवन सब हैं इसके श्रृंगार |

यह हरे-भरे वन, उपवन हमें प्राण वायु देते हैं सघन |
जन जीवन की भाग्य विधाता है, कहते हम धरती माता हैं |
नव-जीवन को भी संबल देती, उन्हें प्राणवायु से संरक्षण देती |
यह धरती भाग्य विधाता है, कहते हम धरती माता हैं |

निष्काम भाव से प्रेरित कर, धन धान्य भी हमको देती है |
पर्वत, बादल, आकाश,वायु सब इसके ही सहचर हैं |
सूर्य रश्मि और चंद्र प्रभा, हम सबके जीवनदाता हैं |
यह धरती सबकी माता है, हम सबकी भाग्य विधाता है |

जीवन अक्षय का आशीर्वाद हमें, देती है प्रतिदिन शाम हमें |
यह धरती सबकी माता है, हम सबकी भाग्य विधाता है |

चित्रांकन : ऋषित धरा

ISSN: 09758-4342
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण | वनस्पति वाणी अंक 30: 61 (2021)

पर्यावरण संबंधी विविध जानकारियां

कैलाश प्रसाद कुशवाहा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

1. जल शक्ति मंत्रालय के राष्ट्रीय जल मिशन ने युवा कार्यक्रम और खेल मंत्रालय के नेहरू युवा संगठन की सहायता से "जल शक्ति अभियान कैच द रेन" नामक एक जागरूकता अभियान शुरू किया है। इस अभियान का टैग लाइन है - "वर्षा के जल का संचयन, जहाँ भी हो, जब भी हो"।

2. समुद्री कचरा : महासागरों के किनारे अवस्थित देशों ने समुद्र में फैले प्लास्टिक के कचरे से निपटने का निर्णय लिया है। ये देश इस कार्य को एक वैश्विक परियोजना " ग्लोलिटर पार्टनरशिप प्रोजेक्ट" के द्वारा निष्पादित करेंगे। प्रतिवर्ष काम से काम 80 लाख टन प्लास्टिक हमारे महासागरों में विभिन्न माध्यमों से पहुँचता है।

3. ब्लू नेचर एलायंस : जैव विविधता के संरक्षण के लिए यह एक वैश्विक साझेदारी है। क्लाइमेट-स्मार्ट

4. पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप : विश्व बैंक के अनुसार, पेरिस जलवायु समझौते को कार्यान्वित करने और अल्प-कार्बन अर्थव्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त वित्त की आवश्यकता है। इस परिस्थिति में जलवायु संबंधी वित्त में पर्याप्त वृद्धि करने के लिए क्लाइमेट-स्मार्ट पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप की आवश्यकता है। इसके तहत बेहतर कार्यान्वयन, समावेशी दृष्टिकोण, पूंजी उपलब्धता, तकनीकी विशेषज्ञता आदि संभव हो जाती है।

5. लाल गुलाब को प्यार की निशानी के रूप में गिना जाता है जबकि गुल दाउदी को मृत्यु /शोक की निशानी के रूप में।

6. गोल्डमैन एन्वायरमेंटल प्राइज को पर्यावरण के क्षेत्र में सबसे बड़ा पुरस्कार माना जाता है। इसे ग्रीन नोबेल भी कहा जाता है।

7. पर्यावरण बांधव के क्षेत्र में डेनमार्क स्थान प्रथम है। इसका ईपीआई स्कोर 82. 5 है। जैव विविधता के मामले में इसकी कार्यशैली सराहनीय है। इसके पश्चात लक्जमबर्ग, स्विट्जरलैंड, ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रिया व फिनलैंड का नाम आता है।

8. न्यू गुनिया में वर्त्तमान समय में 13,634 वनस्पति प्रजातियां पायी गई है। इस प्रकार विश्व वनस्पति प्रजाति के लिए यह द्वीप प्रथम स्थान पर है।

9. बिहार पर्यावरण पर जागरूक होने वाला देश का पहला राज्य है। जल-जीवन हरियाली योजना का जमीनी स्टार पर लागू किया जाना सराहनीय है। राज्य में पारिस्थितिकीय असंतुलन को देखते हुए बिहार के सभी प्रखंडों में जल जीवन हरियाली मिशन लागू करने का निर्णय लिया है।

10. पर्यावरण के अनुकूल जीवन शैली के लिए भारत में इको रिट्रिट का मार्ग प्रशस्त कर रहा है ओड़िसा। इसके तहत रमणीय रामचंडी समुद्र तट पर शानदार कैंपिंग के लिए एक इको रिसॉर्ट स्थापित किया गया है।

11. कॉप-26 : संयुक्त राष्ट्र का 26वां जलवायु परिवर्तन सम्मेलन को आयोजन यूनाइटेड किंगडम के ग्लासगो में आयोजित किया गया था। इसे कॉप-26 के नाम से भी जाना जाता है। इस सम्मेलन का एक मुख्य उद्देश्य था कि औद्योगिक युग की शुरुआत की तुलना में वैश्विक तापमान वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस के भीतर कैसे रखा जाए। वर्ष 2015 के पेरिस समझौते में यही लक्ष्य तय किया गया था। ग्लासगो जलवायु संधि में "तापमान वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने के प्रयासों को आगे बढ़ाने का संकल्प लिया गया।" जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन के क्योटो प्रोटोकॉल से पेरिस समझौते की तरफ अग्रसर होने के बाद कॉप का आयोजन पहली बार हुआ। नए फ्रेमवर्क की तरफ अग्रसर होने का तात्पर्य है कि अब सभी देशों को ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी का लक्ष्य निर्धारित करना होगा। यद्यपि यह लक्ष्य स्वैच्छिक होना है। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत सिर्फ अमीर देशों को उत्सर्जन में कटौती करना था। इसके अतिरिक्त कोविड महामारी और अर्थव्यवस्था पर पड़े इसके प्रभाव की वजह से भी लोग, कॉप को लेकर उत्सुक थे। इस कॉप के दौरान भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने घोषणा की 2070 तक नेट जीरो का लक्ष्य हासिल कर लिया जाएगा। इसके साथ ही भारत भी अब उन देशों में शामिल हो गया जिनका उत्सर्जन में कमी का लक्ष्य तय हो गया है। बीते दो दशक तक भारत ने खुद को इसमें शामिल करने का विरोध किया था। रियो शिखर सम्मेलन के बाद से, भारत के अपने तर्क रहे हैं कि ऐतिहासिक तौर पर उत्सर्जन में भारत की भूमिका नगण्य रही है। देश में करोड़ों लोग अभी गरीबी रेखा से नीचे हैं। इन सबको ध्यान में रखते हुए भारत को विकास के लिए जरूरी कदम उठाने ही होंगे। ऐसे में उत्सर्जन में कटौती करना मुश्किल होगा। पर पेरिस समझौते के साथ, भारत ने भी राष्ट्रीय स्तर पर उत्सर्जन में कटौती की घोषणा की। प्रधानमंत्री की ग्लासगो में की गयी घोषणा इस सिलसिले को आगे बढ़ाती है। पहले 2030 तक 450 गीगावॉट अक्षय ऊर्जा का लक्ष्य हासिल करने की घोषणा की गयी थी। ग्लासगो में, इसे बढ़ाकर 500 गीगावॉट कर दिया गया। प्रधानमंत्री के अनुसार 2030 तक ऊर्जा आवश्यकताओं का 50 फीसदी तक स्वच्छ ऊर्जा से हासिल किया जाना है। शिखर सम्मेलन के आखिर में अधिकतर लोगों का मानना रहा कि दुनिया को ग्लोबल वार्मिंग से बचाना है तो बड़े-बड़े वादों को जमीनी कार्रवाई में बदलने की जरूरत है।

राजभाषा संबंधित महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन

कैलाश प्रसाद कुशवाहा

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मुख्यालय, कोलकाता

1. राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3 (3) की धारा के अंतर्गत संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएं, प्रशासनिक व अन्य रिपोर्टें, प्रेस विज्ञप्तियां,संविदा, करार, अनुज्ञप्तियां आदि द्विभाषिक रूप में (अंग्रेजी और हिंदी) जारी किए जाएं|

2. राजभाषा नियम, 1976 के नियम 6 के निदेशानुसार धारा 3 (3) के अंतर्गत जारी होने वाले दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति का यह दायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करे ऐसे दस्तावेज हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार, निष्पादित अथवा जारी किए जाएं|

3. राजभाषा नियम, 1976 के नियम 5 के अनुसार केंद्र सरकार के कार्यालयों से हिंदी में प्राप्त पत्रादि का उत्तर हिंदी में ही दिया जाना है|

4. राजभाषा नियम, 1976 के नियम 10 (4) के अनुसार केंद्र सरकार के जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत कार्मिकों ने हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया हो,उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएं|

5. राजभाषा नियम, 1976 के नियम 11 के अनुसार सभी मैनुअल, संहिताएं और असांविधिक प्रक्रिया साहित्य, रजिस्टरों के प्रारूप और शीर्षक, नामपट्ट, साइन बोर्ड, पत्र शीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें भी हिंदी और अंग्रेजी (डिग्लॉट फॉर्मेट) में होंगी|

6. राजभाषा नियम, 1976 के नियम 12 के अनुसार केंद्र सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह दायित्व है कि वह यह सुनिश्चित करे कि राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम के प्रावधानों तथा इनके अधीन जारी किए गए निदेशों का समुचित रूप से अनुपालन हो तथा इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त एवं प्रभावकारी जांच बिंदु बनाए जाएं|

7. हिंदी बोले जाने और लिखे जाने के आधार पर देश के राज्यों/ संघ राज्य क्षेत्रों को तीन क्षेत्रों में विभाजित किया गया है| इन तीन क्षेत्रों का विवरण निम्नानुसार है :-

क्षेत्र	क्षेत्र में शामिल राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र
क	बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड राज्य तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली और अंडमान व निकोबार द्वीप समूह संघ राज्य क्षेत्र।
ख	गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमन व दीव और दादरा व नगर हवेली संघ राज्य क्षेत्र।
ग	क और ख क्षेत्र में शामिल नहीं किए गए अन्य सभी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र।

8. 'क' तथा 'ख' क्षेत्रों में सभी प्रकार का प्रशिक्षण चाहे वह अल्पावधि का हो अथवा दीर्घावधि का, सामान्यतः हिंदी माध्यम से हो| 'ग' क्षेत्र में प्रशिक्षण सामग्री हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराई जाए और प्रशिक्षणार्थी की मांग के अनुसार हिंदी या अंग्रेजी में उपलब्ध कराई जाए|

9. हिंदीतर राज्यों में बोर्ड, साइन बोर्ड, नामपट्ट तथा दिशा संकेतकों के लिए क्षेत्रीय भाषा, हिंदी तथा अंग्रेजी इसी क्रम में प्रयोग की जानी चाहिए|

10. अनुवाद कार्य तथा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से जुड़े सभी अधिकारियों / कर्मचारियों को भी अनुवाद के प्रशिक्षण हेतु नामित किया जाए| ऐसे अधिकारियों / कर्मचारियों को भी अनुवाद के प्रशिक्षण के लिए नामित किया जा सकता है , जिन्हें स्नातक स्तर पर हिंदी -अंग्रेजी दोनों भाषाओं का ज्ञान हो तथा जिनकी सेवाओं का उपयोग कार्यालय द्वारा अनुवाद कार्य के लिए किया जा सकता है|

11. केंद्र सरकार के सभी कार्यालय हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए चलाई गई विभिन्न प्रोत्साहन योजनाओं का अपने कार्यालयों में व्यापक प्रचार-प्रसार करें ताकि अधिक से अधिक अधिकारी/कर्मचारी इन योजनाओं का लाभ उठा सके और सरकारी कामकाज में अधिक से अधिक कार्य हिंदी में हो|

12. विभिन्न कार्यालयों में हिंदी में कार्य करने में आ रही कठिनाइयों को दूर करने के लिए हिंदी कार्यशालाओं के आयोजन के संबंध में नए दिशा -निर्देश जारी किए गए हैं| नए दिशा-निर्देशों के अनुसार कार्यशाला की न्यूनतम अवधि एक कार्य दिवस की होगी| कार्यशाला में न्यूनतम दो तिहाई समय कार्यालय से संबंधित विषयों पर हिंदी में कार्य करने का अभ्यास करवाने में लगाया जाए|

13. प्रशिक्षण और कार्यशालाओं सहित राजभाषा हिंदी संबंधी कार्य कर रहे अधिकारियों /कर्मचारियों को कार्यालय में बैठने के लिए अच्छा व समुचित स्थान एवं अन्य आवश्यक सुविधाएं भी उपलब्ध कराई जाएं ताकि वे अपने दायित्वों का निर्वाह ठीक से कर सकें | केंद्र सरकार के सभी कार्यालय अपने दायित्वों से संबंधित शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए आवश्यक कदम उठाएं |

14. केंद्र सरकार के सभी कार्यालय अपने दायित्वों से संबंधित विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित करने तथा अपने विषयों से संबंधित शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए आवश्यक कदम उठाएं |

15. राजभाषा विभाग द्वारा आधुनिक ज्ञान / विज्ञान की विभिन्न विधाओं में मौलिक रूप से हिंदी में पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित करने एवं राजभाषा हिंदी को बढ़ावा देने के उद्देश्य से " राजभाषा गौरव पुरस्कार " दिए जाते हैं | राजभाषा के प्रयोग में बेहतर प्रगति दर्ज करने वाले मंत्रालय /विभाग, कार्यान्वयन समिति तथा हिंदी गृह पत्रिकाओं के लिए " राजभाषा कीर्ति पुरस्कार " राजभाषा विभाग द्वारा दिए जाते हैं | इन दोनों पुरस्कार योजनाओं की जानकारी राजभाषा विभाग की वेबसाइट www.rajbhasha.gov.in पर उपलब्ध है |

16. राजभाषा विभाग ने अपनी वेबसाइट पर "ई-सरल हिंदी वाक्यकोष" शीर्षक के अंतर्गत सामान्यतः अंग्रेजी में प्रयोग होने वाले वाक्यों के हिंदी अनुवाद दिए गए हैं जिनके प्रयोग होने वाले वाक्यों के हिंदी अनुवाद दिए गए हैं जिनके प्रयोग से अधिकारी फाइलों पर सामान्य टिप्पणियां आसानी से हिंदी में लिख सकते हैं |

राजभाषा प्रोत्साहन योजनाएं

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान/हिंदी शिक्षण योजना की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने पर केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों को मिलने वाले वित्तीय प्रोत्साहन (वैयक्तिक वेतन, नकद पुरस्कार, एकमुश्त पुरस्कार आदि)

1. वैयक्तिक वेतन– हिंदी भाषा, हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण एवं हिंदी आशुलिपि की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने पर केंद्र सरकार के अधिकारियों/कर्मचारियों को 12 महीने की अवधि के लिए एक वेतन वृद्धि के बराबर का वैयक्तिक वेतन दिया जाता है।

(क) प्रबोध परीक्षा– वैयक्तिक वेतन केवल उन्हीं अराजपत्रित कर्मचारियों को दिया जाता है जिनके लिए प्रबोध पाठ्यक्रम अंतिम पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित किया गया है और जो इस परीक्षा को 55 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर उत्तीर्ण करते हैं। राजपत्रित अधिकारियों को प्रबोध परीक्षा उत्तीर्ण करने पर वैयक्तिक वेतन नहीं दिया जाता है।

—[का0ज्ञा0 सं0-12014/2/76-रा0भा0 (डी.) दिनांक 2.9.1976पैरा 1(3)]

(ख) प्रवीण परीक्षा– वैयक्तिक वेतन केवल उन्हीं अधिकारियों/कर्मचारियों को दिया जाता है जिनके लिए प्रवीण पाठ्यक्रम अंतिम पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित किया गया है-

(1) अराजपत्रित कर्मचारियों को 55 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर प्रवीण परीक्षा उत्तीर्ण करने पर।

(2) राजपत्रित अधिकारियों को 60 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर प्रवीण परीक्षा उत्तीर्ण करने पर।

—[(का0ज्ञा0सं012014/2/76-रा0भा0(डी.)/दिनांक 2.9.1976पैरा 1(2)]

(ग) प्राज्ञ परीक्षा- वैयक्तिक वेतन केवल उन्हीं सरकारी अधिकारियों/ कर्मचारियों (राजपत्रित /अराजपत्रित) को प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण करने पर दिया जाता है। जिनके लिए यह पाठयक्रम अंतिम पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित किया गया है।

(1) अराजपत्रित कर्मचारियों को उत्तीर्णांक लेकर प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण करने पर।

(2) राजपत्रित अधिकारियों को 60 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण करने पर।

—[(का0ज्ञा0सं0- 12014/2/76-रा0भा0(डी.)/दिनांक 2.9.1976पैरा 1(1)

तथा का0ज्ञा0सं0- 12014/1/78-रा०भा०(डी.) दिनांक 14.2.1979)]

(घ) हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण– हिंदी शब्द संसाधन / हिंदी टंकण की परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले केंद्र सरकार के अराजपत्रित कर्मचारियों को एक वेतन वृद्धि के बराबर 12 महीने की अवधि के लिए वैयक्तिक वेतन दिया जाता है। इसके अतिरिक्त सहायक, अनुवादक, प्रवर श्रेणी लिपिक तथा प्रवर लेखा परीक्षक, जिनके लिए हिंदी टंकण का प्रशिक्षण अनिवार्य नहीं है पर उपयोगी है, को अवर श्रेणी लिपिकों की भांति ही उक्त वित्तीय प्रोत्साहन तथा अन्य सुविधाएँ इस संबंध में जारी की गई विभिन्न शर्तों के अधीन दी जाती हैं।

—[(का0ज्ञा0सं0 12014/2/76-रा0भा0(डी.)/दिनांक 2.9.1976पैरा 1(4)]

तथा (का0ज्ञा0सं0-12016/2/78-रा0भा0(डी.) दिनांक 10.1.1979 क्रमसंख्या-92)

(ङ) हिंदी आशुलिपि– (i) अराजपत्रित आशुलिपिकों को 70 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर हिंदी आशुलिपि की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर 12 महीने के लिए एक वेतन वृद्धि, जो आगामी वेतन वृद्धि में मिला दी जाती है, के बराबर वैयक्तिक वेतन दिया जाता है।

(ii) राजपत्रित आशुलिपिकों को 75 प्रतिशत या अधिक अंक लेकर हिंदी आशुलिपि परीक्षा उत्तीर्ण करने पर वैयक्तिक वेतन दिया जाता है।

जिन आशुलिपिकों (राजपत्रित एव अराजपत्रित दोनों) की मातृभाषा हिंदी नहीं है, उन्हें हिंदी आशुलिपि की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर दो वेतन वृद्धियों के बराबर वैयक्तिक वेतन दिया जाता है। ये वेतन वृद्धियां भावी वेतन वृद्धियों में मिलाई जाएँगी। ऐसे कर्मचारी पहले वर्ष दो वेतन वृद्धियों के बराबर और दूसरे वर्ष पहली वेतन वृद्धि को मिला दिए जाने पर केवल एक वेतन वृद्धि के बराबर वैयक्तिक वेतन प्राप्त कर सकते हैं।

[का0ज्ञा0सं0-12014/2/76/रा0भा0(डी.) दिनांक 2.09.1976)

(का0ज्ञा0सं0-21034/08/2017/रा0भा0(प्रशि) दिनांक 26.07.2017]

टिप्पणी: जिस कर्मचारी को सेवाकालीन हिंदी प्रशिक्षण से छूट मिली हुई हो उस कर्मचारी को संबंधित परीक्षा उत्तीर्ण करने पर किसी प्रकार के वित्तीय लाभ/ प्रोत्साहन नहीं मिलेंगे।

2 नकद पुरस्कार - हिंदी प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण और हिंदी आशुलिपि की परीक्षाएँ अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करने पर पात्रता के अनुसार निम्नलिखित नकद पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं, जिनकी वर्तमान दरें निम्नानुसार हैं-

(क) प्रबोध

- 70 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर रु.1600/-
- 60 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 70 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु. 800/-
- 55 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु. 400/-

(ख) प्रवीण

- 70 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर रु.1800/-,
- 60 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 70 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.1200/-
- 55 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.600/-

(ग) प्राज्ञ

- 70 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर रु.2400/-
- 60 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 70 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.1600/-
- 55 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.800/-

(4) हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण

- 97 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर रु.2400/-
- 95 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 97 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.1600/-
- 90 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 95 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.800/-

(5) हिंदी आशुलिपि

- 95 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने पर रु.2400/-
- 92 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 95 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.1600/
- 88 प्रतिशत या इससे अधिक परंतु 92 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने पर रु.800/-

(6) निजी प्रयत्नों से हिंदी शिक्षण योजना की हिंदीभाषा, हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण एवं हिंदी आशुलिपि परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने पर एकमुश्त पुरस्कार

- हिंदी शिक्षण योजना की प्रबोध परीक्षा रु.1600/-
- हिंदी शिक्षण योजना की प्रवीण परीक्षा रु.1500/-
- हिंदी शिक्षण योजना की प्राज्ञ परीक्षा रु.2400/-

- हिंदी शिक्षण योजना की हिंदी शब्द संसाधन/ हिंदी टंकण परीक्षा रु.1600/-
- हिंदी शिक्षण योजना की हिंदी आशुलिपि परीक्षा रु.3000/-

(का0ज्ञा0सं0- 21034/66/10-रा0भा0 (प्रशि) दिनांक 29.7.2011)

टिप्पणी:

1. जिन कर्मचारियों को हिंदी के सेवाकालीन प्रशिक्षण से छूट प्राप्त है उन्हें संबंधित स्तर की हिंदी परीक्षा उत्तीर्ण करने पर नकद एवं एकमुश्त पुरस्कार देय नहीं होंगे।

2. एकमुश्त पुरस्कार प्रचालन कर्मचारियों के अतिरिक्त केवल उन्हीं कर्मचारियों को दिया जाएगा जो ऐसे स्थानों पर तैनात हैं जहाँ हिंदी शिक्षण योजना के प्रशिक्षण केंद्र नहीं हैं अथवा जहाँ संबंधित पाठ्यक्रम के प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं है।

3. जो प्रशिक्षार्थी निजी प्रयत्नों से हिंदी शिक्षण योजना की हिंदी भाषा, हिंदी शब्द संसाधन/हिंदी टंकण एवं हिंदी आशुलिपि परीक्षाएँ उत्तीर्ण करते हैं उनको एक मुश्त पुरस्कार के अलावा नकद पुरस्कार प्रदान करते समय निर्धारित किए गए प्रतिशत से पाँच प्रतिशत अंक कम प्राप्त करने पर भी नकद पुरस्कार राशि प्रदान की जाएगी।

(का0ज्ञा0सं0- 21034/66/2010/रा0भा0(प्रशि0). दिनांक 29.07.2011)

लेखकों के लिए निर्देश

सभी लेखक वनस्पति वाणी में प्रकाशन हेतु रचनाएं भेजते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:

- लेखक अपनी रचनाएँ भेजते समय लेख के अंत में संदर्भों (अधिकतम 5) का उल्लेख अवश्य करें।
- रचना वनस्पति विज्ञान की किसी महत्वपूर्ण सूचना, अनुसंधान, उपयोग, महत्व इत्यादि से संबंधित एवं मौलिक होनी चाहिए तथा रचना की विषय वस्तु विगत वर्षों में प्रकाशित रचनाओं से भिन्न हो। रचनाएं ए-4 आकार के कागज पर 12 फॉन्ट साइज एवं द्विपंक्ति अन्तर में टंकित अथवा सुपाठ्य एवं स्पष्ट रुप से हस्तलिखित होनी चाहिए। वर्तनी एवं व्याकरण पर विशेष ध्यान दें। प्रयास करें कि लेख की पांडुलिपि 10 टंकित पृष्ठों से अधिक न हो तथा छाया चित्रों की अधिकतम दो ही प्लेटें हों।
- कविताएं प्रस्तुत करते समय ध्यान रखें कि कविता का मूल भाव स्पष्ट रहे एवं कविता तुकान्त हों।
- वर्गीकरण शब्दावली का प्रयोग Class - वर्ग, Order - गण, Family - कुल, Genus - वंश, Species - जाति, Sub-species - उपजाति, Variety - प्रभेद, Form - रुप में करें। तथा टंकित रचनाओं में वंश एवं जाति का नाम तिरछे (italic) में एवं हस्तलिखित रचनाओं में रेखांकित (underline) करें।
- वनस्पतियों के नाम लिखते समय ध्यान रखें कि सबसे पहले वनस्पति का प्रचलित नाम तत्पश्चात् यदि आवश्यक हो तो वनस्पतियों के क्षेत्रीय नामों का प्रयोग प्रचलित के बाद किया जाये।
- एक ही लेख में एक ही तथ्य की बार-बार पुनरावृत्ति से बचें।
- औषधीय उपयोग से संबंधित लेखों में रोगों के प्रचलित हिंदी नामों का प्रयोग करें। अंग्रेजी नामों को अपरिहार्य स्थिति में देवनागरी लिपि में लिखें।
- जहाँ तक संभव हो लेख को सहज एवं सरल रुप प्रस्तुत करें, जिससे सभी पाठक सुगमता से समझ सकें।
- लेख में सम्मिलित फोटो-प्लेट्स के साथ इसमें उपयोग किये गये छायाचित्रों की अलग (JPEG) फाइल भी भेजें एवं छायाचित्रों की प्लेंटें बनाते समय लिजेन्ड में संख्यागत क्रम (1,2,3.....) का प्रयोग करें, प्लेंटों पर प्रयोग किये गये चित्रों की मूल प्रति अनिवार्यतः उपलब्ध करवाएं।
- इन्टरनेट से लिये गये चित्रों का प्रयोग कदापि न करें तथा कॉपीराइट नियमों का उल्लंघन नहीं करें।
- रचनाओं में दिए गये तथ्यों एवं सूचनाओं के लिये लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे, अतः तथ्यपूर्ण एवं वैज्ञानिक रचनाएँ ही भेजें।
- विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालयों के कार्यालयअध्यक्षों से अपेक्षा है कि वे अपने स्तर पर लेखों/कविताओं का मूल्यांकन एवं सम्पादन कर, मुख्यालय को प्रेषित करें।

1. केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण द्वारा प्रकाशित पुस्तकों के बिक्री हेत 'सेल काउन्टर' का निदेशक, भा.व.स. द्वारा उद्घाटन;
2. 'सेल काउन्टर' के उद्घाटन के अवसर पर निदेशक, भा.व.स. का संबोधन;
3. केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय में 'सेल काउन्टर' के उद्घाटन के अवसर पर निदेशक, भा.व.स. के संबोधन को सुनते हुए अधिकारीगण एवं कर्मचारीगण;
4. केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय में अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस 2021 के अवसर पर निदेशक, भा.व.स. द्वारा पानी में मछली छोड़ते हुए

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, सी. जी. ओ. कॉम्प्लेक्स, सॉल्ट लेक सिटी, कोलकाता -700 064 द्वारा प्रकाशित